वैदिकधर्म

मार्गशीर्ष सं० २००३
दिसंबर १९४६
क्रमांक ३२४



वै दि क ध र्म

विषयसूची

वैदिक धर्म

क्रमांक ३२४

वर्ष २७ | मार्गशीर्ष, विक्रमीय संवत २००३; दिसंबर १९४६ | अङ्क १२

इन लोगोंको शुभ मनवाले करो

सं वः पृच्यन्तां तन्वः सं मनांसि समु व्रता ।
सं वोऽयं ब्रह्मणस्पतिर्भगः सं वो अजीगमत ॥१॥
संज्ञपनं वो मनसोऽथो संज्ञपनं हृदः ।
अथो भगस्य यच्छ्रान्तं तेन संज्ञपयामि वः ॥२॥
यथादित्या वसुभिः संबभूवुर्मरुद्भिरुग्रा अहृणीयमानाः ।
एवा त्रिणामन्नहृणीयमान इमान् जनान् त्संमनसस्कृधीह ॥३॥

(अथर्व. ६।७४)

"तुम्हारे शरीर (अर्थात् तुम सब लोग) इकट्ठ हो जाए, तुम सब लोगोंके मन और तुम सब लोगोंके कर्म एक विचारसे होते रहें। ज्ञानके स्वामी इस प्रभुने तुम्हें इकट्ठा किया है। साथही इस धनके स्वामी प्रभुने तुम्हें मिला दिया है ॥

"इस कार्यसे तुम्हारे मनकी एकता हो और तुम सब लोगोंके हृदय भी एक हो जायँ। धनका स्वामी तुम्हारी एकता करते करते थक गया है, वही एकताका कार्य मैं आगे बढाता हूँ ॥

"जैसे तेजस्वी प्रभावी आदित्यवीर वसुओं और मरुद्वीरोंके साथ क्रोध न करते हुए मिलकर संगठित होकर, अपना समूह बनाकर सामुदायिक रीतिसे, अपने कार्य करते रहे, उसी प्रकार हे तीन यशोंवाले ! क्रोध छोडकर तू भी सब जनोंको संगठित बनानेका कार्य करते जाओ।"

[तात्पर्य— संगठनका कार्य करनेवाले क्रोध छोडें, व्यक्ति समाज-राष्ट्रके कार्य करते हुए इन तीनों यशोंको प्राप्त करें और अपनी सब शक्ति संगठनके कार्यके लिये लगाते जायँ।]

महामना मालवीयजीकी अन्तिम घोषणा

मानवताकी रक्षा करो ! सब हिन्दू संघटित हो जाओ !

"मैं महसूस करता हूँ कि मानवता खतरेमें है। हिंदू-संस्कृति और धर्म खतरेमें है। संकट-काल उपस्थित है, और यही समय है जब हिंदुओंको एकताके सूत्रमें आबद्ध हो जाना चाहिए। हमें सहायताविषयक साधनोंको शक्ति-सम्पन्न बनाना चाहिए और आत्म-रक्षाके लिए प्रस्तुत हो जाना चाहिए। हिंदू जातिके लिए इस समय जीवन्-मरणकी समस्या उपस्थित है।

"वर्षोंसे हिंदुओंने देशमें हिंदू-मुस्लिम एकता कायम रखनेकी पूरी कोशिश की है। हिंदुओंने अपने हितोंका त्याग करते हुए भी इस एकताके लिए आजतक सब कुछ किया। आज भी हिन्दु सहयोग और सहन करनेके लिये तैयार हैं; किन्तु उनकी इस सहन-शक्तिको कमजोरी समझा जा रहा है। हिंदुओंके लिए तत्काल संगठित हो जाना आवश्यक है। देशभक्त और त्यागी हिंदू युवकोंको हिंदू धर्म, संस्कृति और सभ्यताकी रक्षाके लिए शीघ्रही संगठित हो जाना चाहिए। वर्णों और जातियोंके भेदको भुला देना चाहिए। हमारा उद्देश्य यह होना चाहिए कि हम अपने धर्म और सम्पत्तिकी रक्षा कर सकें।

"उन लोगोंके प्रति कोई सहिष्णुता नहीं दिखाई जा सकती, जो हिंदुओंको शान्ति-पूर्वक नहीं रहने देते। यदि धर्म संगठनका बिगुल है, तो उसे इतना प्रभावपूर्ण होना चाहिए, जिससे कि हिंदुओंपर किए जानेवाले हमले विफल कर दिए जायँ। आत्म-सम्मानकी भावनामें साहसका इस प्रकार समावेश होना चाहिए, जिससे कि छुट-पुट होनेवाले हमले विफल हो जायँ। किसी भी मूल्यपर शान्ति-स्थापन करना समस्याका और खास करके साम्प्रदायिक समस्याका कोई हल नहीं है। हिंदुओंको अनिवार्यतः अपने हिंदू भाईयोंके प्रति अपने कर्तव्यका पालन करना होगा। हिंदुओंका हृदय यह सोचकर कृतज्ञताकी भावनासे ओतप्रोत होना चाहिए कि वे उन ऋषि महर्षियों और महात्माओंकी संतानें हैं, जिन्होंने इस भूतलको स्वर्गके रूपमें परिणत कर दिया था और संसारमें बन्धुत्वकी भावना प्रतिष्ठित कर दी थी।

"हिन्दुओंको अवश्यमेव अपने हिन्दू भाइयोंकी रक्षा करनी होगी। हिन्दुओंकी रक्षा की जानेकी नितान्त आवश्यकता है। पाशविक हमलों, झूठे राजनीतिक अथवा समझौतेकी नीतिसम्बन्धी भ्रामक धारणाओंकी वजहसे वे कदापि अपने धर्मको मिटाने, अपनी संस्कृतिको विनष्ट होने अथवा अपनी संख्याको कम न होने देंगे। अगर हिन्दू अपनी रक्षा नहीं करते, तो वे मिट जायँगे। यदि वे अपना संगठन नहीं करते, तो देखते-देखते उनका विनाश हो जायगा। यदि वे अपना कदम आगे न बढायेंगे, तो वे अकर्मण्य बनकर मृत्युको प्राप्त होंगे। उन्हें अनिवार्यतः चुपचाप बैठे न रहना होगा। उनमें विश्वासका संचार होनाही चाहिये। उन्हें साहसी बननाही चाहिए। उन्हें समस्त हिन्दुओंके प्रति अनिवार्यतः सहिष्णुता दिखानी चाहिए; किन्तु उन मुसलमानोंके प्रति नहीं, जो कि उनके साथ शान्ति-पूर्वक नहीं रहना चाहते।

यदि हिन्दू जातिको जीवित रहना है, तो उसे अवश्यही अपनेको सुदृढ बनाना होगा।

"सम्भव है कि हिन्दुओं तथा अन्य जातियोंका राजनीतिक हित कांग्रेसके हाथोंमें सुरक्षित समझा जाय; किन्तु सर्वथा साम्प्रदायिक प्रश्नोंके सम्बन्धमें, अवश्यही एक हिन्दू संस्थाको बोलने और कार्य करनेका अन्तिम अधिकार प्राप्त होना चाहिए। धर्म-परिवर्तन अवश्यमेव रोकना होगा। वे मुसलमान और खास करके वे हिन्दू, जो जबरदस्ती मुसलमान बना लिए गए हैं और जो हिंदू बनना चाहते हैं, उन्हें ऐसा करनेके लिए अवश्यही सुविधाएँ प्रदान करनी होंगी। हिंदुओंको इसके लिए यथेष्ट कार्रवाई करनी होगी, मुसलमानोंकी सामाजिक और आर्थिक बहिष्कारकी धमकीका उनपर कोई प्रभाव न पडने पावे। हिंदुओंको अपने मस्तिष्कसे भयकी भावना मिटा देनी चाहिये। उन्हें साहसी और शक्तिशाली बनना चाहिए। उन्हें सैनिक-शिक्षा प्राप्त करनी और स्वयंसेवक-दल स्थापित करने चाहिए और आत्म-रक्षाके लिए एक केन्द्रीय स्वयंसेवक-दल संगठित करना चाहिए।"

ॐ

ऋग्वेदका सुबोध भाष्य

(१)

गोतम ऋषिका दर्शन

(ऋग्वेदके द्वादश और त्रयोदश अनुवाक)

लेखक

पं० श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,

अध्यक्ष, स्वाध्याय-मण्डल, औन्ध, [जि० सातारा]

संवत् २००३

मूल्य २) रु०

मुद्रक तथा प्रकाशक- **वसंत श्रीपाद सातवळेकर**, B. A.
भारत-मुद्रणालय, औंध (जि. सातारा)

गोतम ऋषिका तत्त्वज्ञान

ऋग्वेदमें ' गोतम ' ऋषिका स्थान बडा ऊँचा है। रहूगण ऋषिका यह पुत्र है। गोतमके दो पुत्र मंत्रोंके द्रष्टा ऋषि हुए हैं। एक नोधा ऋषि और दूसरा वामदेव है। नोधा ऋषिका दर्शन ८५ मंत्रोंका छपा है। यह ऋग्वेदके ऋषि दर्शनोंमें ७ वां है। वामदेवका दर्शन ऋग्वेदका चतुर्थ मण्डलही है, जो ५८९ मंत्रोंका है और इसमें वामदेवके मन्त्र करीब करीब ५६६ हैं, और २३ मंत्र अन्योंके उसी चतुर्थ मंडलमें हैं।

रहूगण (१२ मंत्र)
|
गोतम (२१४ मंत्र)
|
(५६६ मंत्र) वामदेव   नोधाः (८५ मंत्र)

इस तरह इन ऋषियोंके देखे मंत्र एकएक पुश्तमें बढे हैं। अब यह गौतम ऋषिका दर्शन है इसके मंत्रोंका ब्यौरा यह है-

सूक्तवार मन्त्र-संख्या

ऋग्वेद प्रथममण्डल

त्रयोदशोऽनुवाकः।

सूक्त	देवता	मंत्र-संख्या	
७४	अग्निः	९	
७५	,,	५	
७६	,,	५	
७७	,,	५	
७८	,,	५	
७९	,,	१२	४१
८०	इन्द्रः	१६	
८१	,,	९	
८२	,,	६	
८३	,,	६	
८४	,,	२०	५७

चतुर्दशोऽनुवाकः।

८५	मरुतः	१२	
८६	,,	१०	
८७	,,	६	
८८	,,	६	३४
८९	विश्वे देवाः	१०	
९०	,,	९	१९
९१	सोमः	२३	
९२	उषाः	१५	
,,	अश्विनौ	३	
९३	अग्नीषोमौ	१२	५३

ऋग्वेद नवममण्डल

३१	पवमानः सोमः	६	
६७	,,	३	

ऋग्वेद दशममण्डल

२३	वायुः	१	१०

कुल-मंत्रसंख्या २१४

येही मंत्र देवतावार ऐसे बांटे गये हैं—

देवतावार मंत्र-संख्या

देवता	मंत्रसंख्या
१ इन्द्रः	५७
२ अग्निः	४१
३ मरुतः	३४
४ सोमः	३२
५ विश्वे देवाः	१९
६ उषाः	१५
७ अग्नीषोमौ	१२
८ अश्विनौ	३
९ वायु	१
कुल-मंत्रसंख्या	२१४

इसमें इन्द्र देवताके मंत्र सबसे अधिक हैं, अग्नि, मरुत् और सोम ये उससे कम मंत्रवाले देवता हैं। अन्य देवताके मंत्र इससे भी कम हैं।

इस ऋषिके नामपर निम्नलिखित छन्दोंके मंत्र हैं—

१ गायत्री छन्द		७०
२ त्रिष्टुप्	,,	४७
३ जगती	,,	३४
४ पंक्ति	,,	३३
५ उष्णिक्	,,	१३
६ अनुष्टुप्	,,	११
७ बृहती	,,	२
(बृ + सतो बृ० = प्रगाथः)		
८ प्रस्तारपंक्ति		२
९ विराड्रूपा		१
१० विराट्स्थाना		१
कुल-मंत्रसंख्या		२१४

इन मंत्रोंमें गायत्री छन्दके मंत्र सबसे अधिक, त्रिष्टुप्, जगती और पंक्तिके मंत्र उससे कम और अन्य छन्दोंके मंत्र इससे भी कम हैं। किस देवताकी उपासना किन छन्दोंमें हुई है यह निम्न स्थानमें दी तालिकामें देखिये–

इसमें स्पष्ट हो रहा है कि इन्द्रकी उपासना पंक्ति छंदमें, अग्निकी गायत्री और त्रिष्टुप्में, मरुतोंकी गायत्री तथा जगतीमें, सोमकी गायत्रीमें विशेष कर हुई है। अन्य देवताओंके साथ अन्य छन्दोंका संबंध इस तालिकासे मालूम हो सकता है। ब्राह्मणों, उपनिषदों और निरुक्तमें देवताके साथ छन्दका संबंध बताया है वह उस देवताकी उपासना किस छन्दमें अधिक हुई है यह देखकर बताया है। वह ज्ञान ऐसी तालिकाओंसे हो सकता है।

	१ गायत्री	२ त्रिष्टुप्	३ जगती	४ पंक्ति	५ उष्णिक्	६ अनुष्टुप्	७ बृहती	८ प्र-पंक्ति	९ विराड्रूपा	१० विराट्स्थाना	कुलमंत्र-संख्या
१ इन्द्रः	३	३	७	३३	३	६	२	...	...	...	५७
२ अग्निः	२५	१३	...	...	३	...	...	...	...	...	४१
३ मरुतः	१०	५	१६	...	...	...	...	२	१	...	३४
४ सोमः	२१	१०	...	...	१	...	...	...	...	...	३२
५ विश्वेदेवाः	८	३	६	...	...	१	...	...	...	१	१९
६ उषाः	...	८	४	...	३	...	...	...	...	...	१५
७ अग्नीषोमौ	३	५	१	...	...	३	...	...	...	...	१२
८ अश्विनौ	...	...	...	...	३	...	...	...	...	...	३
९ वायुः	...	...	...	...	...	१	...	...	...	...	१
	७०	४७	३४	३३	१३	११	२	२	१	१	२१४

यहां इस ऋषिके मंत्रोंके अग्नि, इन्द्र, मरुत विश्वेदेवा, सोम, उषा, अश्विनौ, अग्नीषोमौ, पवमान सोम और वायु इतने देवताओंके प्रकरण हैं। प्रत्येक प्रकरणमें पहिला सूक्त अधिक मंत्रोंका और आगेके सूक्त कम मंत्रोंके क्रमसे हैं।

पहिले ५ सूक्तोंमें पहिला नौ मंत्रोंका है इसलिये प्रथम आया है। छठा सूक्त अनेक छंदोंवाला और विभिन्न प्रकारके देवताका, विभिन्न अग्निके स्वरूपका है, इसलिये वह अन्तमें रखा है।

इसी तरह इन्द्र सूक्त ५ हैं, सूक्तोंकी मंत्रसंख्या क्रमसे १६; ९; ६, ६ है, यहांतक उतरता क्रम स्पष्ट है। पांचवे सूक्तमें

अनेक छंद है, इसलिए यह अन्तमें रखा गया है। देवताप्रकरणमें एकएक छन्दके सूक्त प्रथम आते है, इनमें मन्त्रसंख्याकी अधिकतासे सूक्तक्रम होता है। अनेक छन्दोंवाला सूक्त रहा तो वह इनके बाद आता है।

तृतीय 'मरुत् प्रकरण' है, इसमें १२;१०;६;६ मंत्रोंवाले क्रमशः सूक्त उतरते क्रमसेही हैं।

चतुर्थ प्रकरणमें 'विश्वे देवा' देवता है और इसके दो सूक्त १०; ९ ये भी संख्याके उतरते क्रमसेही है।

आगेके सूक्त एकएक देवताके एकएकही हैं। इसलिये इनमें क्रमका संबंधही नहीं हो सकता। एकसे अधिक एक देवताके सूक्त हों और उनमें मंत्रसंख्यामें विभिन्नता हो, तब क्रम बनाया जा सकता है। ऋग्वेदमें जहां जहां एक देवताके अनेक सूक्त एक स्थानपर रखे गये हैं, वहां मंत्रसंख्याके उतरते क्रमसेही रखे हैं। देवतभेद अथवा छन्दभेदके कारण इस नियममें अपवाद हुआ है।

यह नियम समझमें आनेसे कोई भी सूक्त मिला तो उसका स्थान, ऋषि, देवता, छन्द और मंत्रसंख्यासे जाना और वह आज भी ठीक तरहसे निश्चित किया जा सकता है। जो आज ऋग्वेदमें है वही ठीक आ जायगा।

गोतम ऋषिका वेदोंमें नाम

'गोतम' ऋषिका नाम वेदोंमें कहां आया है सो अब देखिये—

नोधा ऋषिके मंत्रोंमें

तं त्वा वयं पतिमग्ने रयीणां प्रशंसामो मतिभिर्गोतमासः। (ऋ. १।६०।५)

इन्द्र, ब्रह्माणि गोतमासो अक्रन्। (ऋ १।६१।१६; अथ. २०।३६।१६)

सनायते गोतम इन्द्र नव्यं अतक्षद् ब्रह्म हरियोजनाय। (ऋ. १।६२।१३)

अकारि त इन्द्र गोतमेभिः ब्रह्माणि०। (ऋ १।६३।९

गोतम ऋषिके मंत्रोंमें

एवाग्निर्गोतमेभिर्ऋतावा विप्रेभिरस्तोष्ट जातवेदाः। (ऋ. १।७७।५)

अभि त्वा गोतमा गिरा जातवेदो विचर्षणे ॥१॥

तमु त्वा गोतमो गिरा रायस्कामो दुवस्यति ॥२॥ (ऋ. १।७८)

प्र पूतास्तिग्मशोचिषे वाचो गोतमाग्नये। भरस्व० ॥ (ऋ. १।७९।१०)

सिञ्चन्नुत्सं गोतमाय तृष्णजे। (ऋ. १।८५।११)

ब्रह्म कृण्वन्तो गोतमासो अर्कैः०।

सस्वर्हं यन्मरुतो गोतमो वः॥ (ऋ. १।८८।४-५)

दिवः स्तवे दुहिता गोतमेभिः। (ऋ. १।९२।७)

कक्षीवान् ऋषिके मंत्रोंमें

क्षरत्पयो न पानाय राये सहस्राय तृष्यते गोतमस्य ॥ (ऋ १।११६।९)

अगस्त्यो (मैत्रावरुणिः) ऋषिके मंत्रोंमें

युवां गोतमः पुरुमीळ्हो अत्रिः दस्रा हवते अवसे०। (ऋ १।८३।५)

अथर्ववेदमें गोतमके मन्त्र

प्रायः ऋग्वेदकेही मंत्र अथर्ववेदमें लिये हैं, देखिये—

	ऋग्वेद		अथर्ववेद	मन्त्रसंख्या
	१।८६।१		२०।१।२	१
	१।८५।६		२०।१३।२	१
(सव्यः)	१।५७।१-६	(गोतमः)	२०।१५।१-६	६
	१।८३।१-६		२०।२५।१-६	६
	१।८४।१३-१५		२०।४१।१-३	३
	१।८१।१-३,४-६		२०।५६।१-३,७-९०	६
	१।८४।७-९		२०।६३।४-६	३
	१।८४।१०-१२		२०।१०९।१-३	३
				२९

कुल उनतीस मंत्र गोतम ऋषिके ऋग्वेदसे अथर्ववेदमें लिये हैं। इनमें १-५७।१-६ ये छः मंत्र ऋग्वेदमें सव्य ऋषिके हैं जो अथर्ववेदमें गोतमके नामपर लगाये दीखते हैं। यह अथर्वसर्वानुक्रमकी अशुद्धि है, इनका ऋषि ऋग्वेदकाही योग्य है और यही अथर्ववेदमें लिखना चाहिये। ये ऋग्वेदके ही मन्त्र हैं इसलिये इनका लेखन दुबारा नहीं किया है।

वामदेव ऋषिके मंत्रोंमें

तन्मा पितुर्गोतमादन्वियाय। (ऋ. ४।४।११, काठ. ६।११)

अवीवृधन्त गोतमा इन्द्र त्वे स्तोमवाहसः। (ऋ ४।३२।१२)

नोधा ऋषिके मंत्रोंमें

आ त्वायमर्क ऊतये ववर्तति यं गोतमा अजीजनन् ॥ (ऋ ८।८८।४)

अथर्ववेदमें

मृगार ऋषिके मंत्रोंमें

यौ गोतममवथः ॥ (अथ. ४।२९।६)

अथर्वा ऋषिके मंत्रोंमें

भरद्वाज गौतम वामदेव ।० मृडता नः । (अथ. १८।३।१६)

इतने ऋषियोंके इन मंत्रोंमें गोतम' पद आया है और यहांके निर्देश मननीय हैं।(वयं गोतमासः त्वा प्रशंसामः) हम गोतम ऋषि तेरी प्रशंसा करते हैं । 'गोतमासः ब्रह्माणि अक्रन्' गोतम ऋषिओंने स्तोत्र किये । (गोतमः नव्य ब्रह्म अतक्षत्) गोतम ऋषिने यह नया सूक्त तैयार किया । (गोतमेभिः ब्रह्माणि अकारि) गोतम ऋषियोंने अनेक सूक्त किये । (गोतमेभिः अग्निः अस्तोष्ट) गोतमोंके द्वारा अग्नि प्रशंसित हुआ । (गोतम दुवस्यति)गोतम स्तुति करता है। (गोतम! अग्नये वाचः भरस्व): हे गोतम! अग्निके लिये वाणीसे स्तोत्र भर दे। (गोतमासः ब्रह्म कृण्वन्तः) गोतमोंने स्तोत्र किये। (गोतमेभिः दिवः दुहिता स्तवे) गोतमोंने उषाकी स्तुति की । (गोतमः अवसे हवते) गोतम अपनी सुरक्षाके लिये स्तुति करता है । (गोतमाः इन्द्रं अवीवृधन्त) गोतमोंने इन्द्रकी वधाई की । (गोतमा यं अजीजनन्) गोतमोंने स्तोत्रको जन्म दिया । इस तरह पूर्वोक्त मंत्रोंमें गोतमोंने अग्नि, इन्द्र आदि देवताओंके स्तोत्र बनाये ऐसा कहा है । यहां 'अक्रन् , अतक्षत्, अकारि, कृण्वन्त.' ये क्रियापद विचार करनेयोग्य है । 'अतक्षत्' क्रियापद तो लकडीसे रथ निर्माण करनेके समान स्तोत्र निर्माण करनेका भाव बता रहा है ।

यहां ' गोतमाः, गोतमासः' ये पद अनेक ' गोतम' ये ऐसा भाव स्पष्ट रूपसे बता रहे हैं। अर्थात् यह पद गोतमके वंशमें उत्पन्न ऋषियोंका वाचक है । 'गोतम' पदसे मूल 'गोतम' ऋषिका बोध होता है, पर ' गोतमासः' पद गोतम कुलमें उत्पन्न अनेक ऋषियोंका वाचक है । संभव है कि गोतम ऋषिके गुरुकुलमें जो भी विद्वान् होंगे उनका सामन्यसे यह नाम भी होगा ।

उक्त मंत्रोंमें कुछ अन्य बातें भी देखनेयोग्य हैं - (तृष्णजे गोतमाय उत्सं सिञ्चन्) प्यासे गोतमके पानी पीनेके लिये पानीका हौंज भर दिया। (तृष्यते गोतमस्य पानाय अपः क्षरन्) गोतमको पानी पीनेके लिये मिले इस कारण पानीका प्रवाह बहा दिया ।(यौ गोतमं अवथः) जिन दोनों अश्विदेवोंने गोतमकी सुरक्षा की थी ।

इससे पता लगता है कि गोतम ऋषिके आश्रममें जल नहीं था अश्विदेवोंने बडी दूरसे जलकी नहर लाकर आश्रमके हौंज भर दिये, जिसके बाद वहां जलकी विपुलता हो गयी ।

ब्राह्मणग्रंथोंमें गोतमका नाम

विदेघो ह माथवोऽग्निं वैश्वानरं मुखे बभार, तस्य गोतमो राहूगण ऋषिः पुरोहित आस, तस्मै ह स्मामन्त्र्यमाणो न प्रतिशृणोति, नेन्मेऽग्निर्वैश्वानरो मुखान्निष्पद्यता इति ॥१०॥ तमृग्भिर्ह्वयितुं दध्रे। वीतिहोत्रं त्वा० इति ॥११॥... स ह नैव प्रतिशुश्राव । तं त्वा घृतस्नवीमह इत्येवाभिव्याहरत् । अथास्य घृतकीर्तावेवाग्निर्वैश्वानरो मुखादुज्जज्वाल, तन्न शशाक धारयितुं, सोऽस्य मुखान्निष्पेदे, स इमां पृथिवीं प्रापादः ॥१३॥ तर्हि विदेघो माथव आस। सरस्वत्यां स तत एव प्राङ् दहन्नभीयायेमां पृथिवीं, तं गोतमश्च राहूगणो विदेघश्च माथवः पश्चाद्दहन्तमन्वीयतुः, स इमाः सर्वा नदीरतिददाह, सदानीरेत्युत्तराद् गिरेर्निर्धावति, तां हैव नातिददाह, तां ह स्म तां पुरा ब्राह्मणा न तरन्त्यनतिदग्धाग्निना वैश्वानरेणेति ॥१४॥. . स होवाच। विदेघो माथवः, क्वाहं भवानीत्यत एव ते प्राचीनं भुवनमिति होवाच, सैषाप्येतर्हि कोसलविदेहानां मर्यादा ते हि माथवाः ॥१७॥ अथ होवाच। गोतमो राहूगणः कथं नु न आमन्त्र्यमाणो न प्रत्यश्रौषीरिति स होवाचाग्निर्मे वैश्वानरो मुखेऽभूत्, स नेन्मे मुखान्निष्पद्याते तस्मात्ते न प्रत्यश्रौषमिति ॥१८॥ तदु कथमभूदिति। यत्रैव त्वं घृतस्नवीमह इत्यभिव्याहार्षीस्तदेव मे घृतकीर्तावग्निर्वैश्वानरो मुखादुदज्वालीत्तं नाशकं धारयितुं स मे मुखान्निरपादीति ॥१९॥ (श. ब्रा. १४।१।१०-१८)

मथुका पुत्र विदेघ था। उसने अपने मुखमें सब मानवोंके हित करनेवाले अग्निको धारण किया था। उसका पुरोहित रहूगणका पुत्र गोतम ऋषि था। पुरोहितने राजाको बुलाया, पर राजाने उत्तर नहीं दिया, राजाको यह भय लगा था, कि यदि मैं उत्तर दूं तो मेरे मुखसे अग्नि बाहर निकल आयेगा, वह बाहर निकले इसलिये वह उत्तर नहीं देता था। (१०) उसको पुरोहितने ऋचाओंसे बुलाना चाहा और वीतिहोत्रं (ऋ. ५। २६।३; वा. य. २१४) इस मंत्रसे पुकारा० ॥ (११) पर उसने उत्तर नहीं दिया। पश्चात् 'तं त्वा घृतस्नवी०' (ऋ. ५। २६।२) इस मंत्रसे बुलाया 'तब 'घृत' शब्दका उच्चारण करतेही मुखमें स्थित अग्नि जलने लगा, इस कारण वह राजा उसको मुखमें धर नहीं सका तब वह अग्नि इसके मुखसे बाहर निकल आया, और भूमिपर उतरा ॥ (१३) उस समय वह राजा मथु-पुत्र विदेघ सरस्वती नदीके प्रवाहमें घुस गया। वहांसे वह अग्नि पूर्वकी ओर जलाता हुआ चला, उसके पीछे पीछे गोतम ऋषि राजा विदेघ दौडने लगे। उस अग्निने पृथ्वी-पर की सभी नदियोंको जलाया, शुष्क कर दिया। पश्चात् उत्तर दिशाकी ओर जानेवाली 'सदानीरा' नामक नदि है वहांतक वह अग्नि पहुंचा, उस नदीको वह न जला सका। इसलिये उस नदीमें पानी रहा और 'सदानीरा' ऐसा उसका नाम हुआ। अग्निने जलाकर शुद्ध नहीं किया, इसलिये उसका जल अशुद्ध है ऐसा मानकर ब्राह्मण उस जलमें तैरते नहीं थे। (१४)... मैं कहाँ निवास करूं ऐसा विदेघ माथवने पूछा, अग्निने उत्तर दिया कि इस नदीके पूर्वकी ओर जो भूमि है उसमें रहो।

यह नदी आज भी कोसल और विदेहकी मर्यादा बतानेवाली नदी दीखती है। इसलिये उस विदेह देशको माथव कहते हैं। (१७) तब रहूगणपुत्र गोतम ऋषिने राजासे पूछा कि मेरे पूछनेपर तू उत्तर क्यों देता नहीं था? उसने उत्तर दिया कि मेरे मुखमें अग्नि था, वह गिर न जाय इस कारण मैं नहीं उत्तर देता था। (१८) तब क्या हुआ? जब आपने 'घृत' शब्दवाला मंत्र बोला, तब घृत शब्दके उच्चारण होतेही मेरे मुखमें रहा अग्नि जलने लगा, उसकी ज्वालायें इतनी प्रदीप्त हुई मैं मुखमें उसका धारण करनेमें समर्थ नहीं हुआ और वह अग्नि मेरे मुखसे बाहर निकल आया।

यह कथा आलंकारिक प्रतीत होती है। इसका अलंकार ठीक तरह हमारे समझमें नहीं आया। विद्वान् पाठक हो सके तो इसकी खोज करें। हमने यह शतपथका वचन यहां इसलिये दिया है कि इससे गोतम ऋषि विदेघ राजाके पुरोहित थे और उनका प्रदेश कोसल और विदेहके प्रदेशमें था जो सदानीरा नदीके पासका प्रदेश है। गोतम ऋषि इस राजाके पुरोहित बने थे। यह भी संभव है कि गोतम ऋषि किसी दूसरे देशसे इस राजाने बुलाये होंगे। पर इस राजाके यज्ञमें वे थे, यह सत्य है। और देखिये—

राष्ट्र देनेवाली इष्टि

तां हैतां गोतमो राहूगणः विदांचकार, सा ह जनकं वैदेहं प्रत्युत्ससाद, तां हांगजिद्ब्राह्मणेषु अन्विवेष, तामु ह याज्ञवल्क्यो विवेद, स होवाच सहस्रं भो याज्ञवल्क्य दद्मो, यस्मिन्वयं त्वयि मित्रविन्दामन्वविदामेति, विन्दते मित्रं, राष्ट्रमस्य भवति, अप पुनर्मृत्युं जयति, सर्वमायुरेति, य एवं विद्वानेतयेष्ट्या यजते ॥

(श. ब्रा. ११।४।३।२०)

इस इष्टिको रहूगणपुत्र गोतम ऋषिने जान लिया, इसका ज्ञान राजा जनकको हुआ, उस राजाने वेदवेत्ता ब्राह्मणोंमें इस इष्टिको करनेवाले ब्राह्मणको ढूंढा, उसको मालूम हुआ कि याज्ञवल्क्य इस इष्टिको जानते है। उसने याज्ञवल्क्यसे कहा कि सहस्रमुद्रा दक्षिणा दूंगा यदि तू इस इष्टिको मेरे लिये करा दोगे। इस इष्टिका नाम 'मित्र-विदा' (मित्र बढानेवाली इष्टि) है। इसके करनेसे बहुत मित्र मिलते है, अपने अधिकारमें राष्ट्र रहता है, अपमृत्यु दूर होता है, पूर्ण आयु मिलती है।

इस इष्टिका यह फल है। राष्ट्रकी स्वाधीनता करनेवाली यह 'मित्र-विदा' इष्टि है और यह इष्टि सबसे प्रथम गोतम ऋषिने खोज करके सिद्ध की थी। ये गोतम ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि और राजाजनकके पूर्व समयके हैं इसमें संदेह नहीं है। यथा—

तस्यासत ऋषय सप्त तीर इति, प्राणा वा ऋषयः ······ अयमेव गोतमोऽयं भरद्वाजः।

(श. ब्रा. १४।५।२।६)

'इस शरीरमें सात ऋषि है। यह दक्षिण कान गोतम है और यह उत्तर कान भरद्वाज है।' दो कानोंके ये नाम हैं। यहां शरीरके एक कान (शब्द सुननेके इंद्रिय) को गोतम कहा है। तथा—

प्रातर्गौतमस्य चतुरुत्तरः स्तोमो भवति ।
(श. ब्रा. १४।५।१।१)

' गोतम ऋषिने अग्निष्टोमकी रचना की ' यहां ' प्रातः ' पद अग्निष्टोमका वाचक है । इस यज्ञका विधान सिद्ध करनेमें गोतम ऋषि मुख्य है । इस तरह ब्राह्मण और आरण्यक ग्रंथोंमें गोतम ऋषिका वर्णन बडे गौरवके साथ आया है । पुराणोंमें इसका नाम ' गौतम ' हुआ है, इसका वर्णन वहां जो मिलता है वह ऐसा है—

गौतम

अरुण, आग्निवेश्य, उद्दालक आरुणि, कुश्रि, साति तथा हारिद्रुमत इन ऋषियोंका पैतृक नाम अथवा गोत्र गौतम है । शांडिल्य, आनभिम्लात, भारद्वाज, आग्निवेश्य, मांटि सैतव तथा गार्ग्य ये सब गौतमके शिष्य हैं ।

महाभारतमें गौतम नाम कई स्थानोंमें पाया जाता है ।

स वै दीर्घतमा नाम शापादृषिरजायत ॥२२॥
जात्यन्धो वेदवित्प्राज्ञः पत्नीं लेभे स विद्यया २३
तरुणीं रूपसंपन्नां प्रद्वेषीं नाम ब्राह्मणीम् ।
स पुत्राञ्जनयामास गौतमादीन्महायशाः ॥२४॥
(म. भा. आ. १०४)

गौतमके पिताका नाम दीर्घतमा । दीर्घतमा उचथ्य ऋषिके पुत्र थे । उचथ्यके छोटे बन्धु देवोंके पुरोहित बृहस्पतिके द्वारा शापित होनेसे दीर्घतमा जन्मान्ध हुवे । वे वेदज्ञ, प्राज्ञ, बलवान् तथा बुद्धिमान् थे । प्रद्वेषी नामक ब्राह्मणीके साथ दीर्घतमाका विवाह हुवा । प्रद्वेषीने कुलका यश बढानेवाले गौतम आदि ऋषियोंको जन्म दिया ।

यही कथा अन्य स्थानमें अन्य प्रकारसे पायी जाती है ।

स शापादृषिमुख्यस्य दीर्घं तम उपेयिवान् ।
स हि दीर्घतमा नाम नाम्ना ह्यासीदृषिः पुरा ५४
आनुपूर्व्येण विधिना केशवेति पुनः पुनः ।
स चक्षुष्मान्समभवत् गोतमश्चाभवत्पुनः ॥५६॥
(म. भा. शां. ३४१)

बृहस्पतिके शापसे जन्मान्ध होनेपर दीर्घतमा ऋषिने बारबार केशव नामका जप करनेसे वे नेत्रवान् हुवे और इस कारण गौतम इस नामसे पहचाने जाने लगे ।

शरद्वतस्तु दायादमहल्या संप्रसूयत ।
शतानन्दमृषिश्रेष्ठं तस्यापि सुमहातपाः ॥८॥
(मत्स्य पु. ५०)

वैवस्वत मन्वन्तरके सप्तर्षिओंमेंसे गौतम एक ऋषि थे । आपका नाम शरद्वत गौतम ऐसा भी पाया जाता है । रामायणकी प्रसिद्ध सती अहल्या आपकी पत्नी थी । इन्हे शतानन्द नामक पुत्र हुवा । विद्वान् होनेपर शतानन्द जनकका पुरोहित हुआ था ।

गौतम तथा आङ्गिरस इन दोनोंका तीर्थमाहात्म्यविषयक संवाद हुआ था । महाभारतके अनुशासन पर्वमें पचीसवे अध्यायमें भीष्मने उस संवादका अनुवाद किया है ।

महाभारतमें आपके विषयमें और एक कथा पाई जाती है–

कश्यपोऽत्रिर्वसिष्ठश्च भरद्वाजोऽथ गौतमः ।
विश्वामित्रो जमदग्निः साध्वी चैवाप्यरुन्धती २१
ते च सर्वे तपस्यन्तः पुरा चेरुर्महीमिमाम् ।
समाधिनोपशिक्षन्तो ब्रह्मलोकं सनातनम् ॥२३॥
अथाभवदनावृष्टिमहती कुरुनन्दन ।
कृच्छ्रप्राणोऽभवद्यत्र लोकोऽयं वै क्षुधान्वितः १४
(म. भा. अनु. ९३)

कश्यप, अत्रि, वसिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, विश्वामित्र और जमदग्नि इत्यादि ऋषि और वसिष्ठपत्नी अरुन्धती, ये सब समाधिके द्वारा सनातन लोक पानेके लिये इस पृथ्वीपर तपस्या करते हुवे विचरते थे । अनन्तर अनावृष्टि होनेके कारण वे सब क्षुधातुर होनेके कारण बडे दुर्बल हुवे ।

पृथ्वीनाथ शैब्य वृषादर्भिने उन क्लेश पाते हुवे ऋषियोंको देखा और यह बोला—

वृषादर्भिरुवाच—

प्रतिग्रहस्तारयति पुष्टिर्वै प्रतिगृह्यताम् ।
मयि यद्विद्यते वित्तं तद्वृणुध्वं तपोधनाः ॥१०॥

' हे तपस्विगण, दान लेनेसे पुरुष क्लेशसे छूट जाता है। इसलिये आप लोग पुष्टिके लिये प्रतिग्रह ग्रहण करें । मेरे समीप जो धन है, उसे आप मांगिये । '

परन्तु उन निर्लोभी ऋषियोंके मनमें वह बात नहीं जंची । उन्होंने उत्तर दिया।

ऋषय ऊचुः —

राजप्रतिग्रहो राज्ञां मध्वास्वादो विषोपमः ।
तज्जानमानः कस्मात्त्वं कुरुषे नः प्रलोभनम् ॥१४
(म. भा. अनु. ९३)

'हे महाराज, राजाओंका प्रतिग्रह मधुरकी भाँति स्वादयुक्त होता है। किन्तु वह विषके समान है। तुम उसे जानते हुवे भी हमें किस लिये लोभ दिखा रहे हो?' ऐसा कहकर गौतमादि ऋषियोंने अन्यत्र गमन किया।

गौतमके उत्तंक नामक एक प्रिय शिष्य थे। उनके गुरुभक्तिसे प्रसन्न हुवे हुवे गौतम उन्हे बोले—

इत्थं च परितुष्टं मां विजानीहि भृगूद्वह।
युवा षोडशवर्षो हि यद्यद्य भविता भवान् ॥२२॥
ददामि पत्नीं कन्यां च स्वां ते दुहितरं द्विज।
एतामृतेऽङ्गना नान्या त्वत्तेजोऽर्हति सेवितुम् २३

'हे भृगुओंमें श्रेष्ठ! तुम्हारी भक्तिसे मैं संतुष्ट हुवा हूं। हे ब्रह्मन्, आज यदि तुम सोलह वर्षोंके युवक होते, तो मैं अपनी कन्या तुम्हे पत्नी रूपसे दान करता। इस कन्याके अतिरिक्त अन्य कोई भी तुम्हारे तेजको धारण करनेमें समर्थ नहीं है।

इसपर—

ततस्तां प्रतिजग्राह युवा भूत्वा यशस्विनीम्।
गुरुणा चाभ्यनुज्ञातो ... ... ॥२४॥
(म. भा आश्व. ५६)

उत्तङ्क मुनिने युवा होकर गुरुकी आज्ञानुसार उस यशस्विनी कन्याका ग्रहण किया। गौतमके साथ यम तथा गौतमका संवाद देखिये—

पारियात्रं गिरिं प्राप्य गौतमस्याश्रमो महान्।
उवास गौतमो ... ... ॥४॥
तमुग्रतपसा युक्तं भवितं सुमहामुनिम् ॥ ५ ॥
उपयातो नरव्याघ्र लोकपालो यमस्तदा।
तमपश्यत्सुतपसमृषिं वै गौतमं तदा ॥ ६ ॥
स तं विदित्वा ब्रह्मर्षिर्यममागतमोजसा।
प्राञ्जलिः प्रयतो भूत्वा उपविष्टस्तपोधनः ॥ ७ ॥
तं धर्मराजो दृष्ट्वैव सत्कृत्यैव द्विजर्षभम्।
न्यमन्त्रयत धर्मेण क्रियतां किमिति ब्रुवन् ॥ ८ ॥

गौतम उवाच—

मातापितृभ्यामानृण्यं किं कृत्वा समवाप्नुयात्।
कथं च लोकानाप्नोति पुरुषो दुर्लभाञ्शुचीन् ९

यम उवाच—

तपःशौचवता नित्यं सत्यधर्मरतेन च।
मातापित्रोरहरहः पूजनं कार्यमञ्जसा ॥ १० ॥
अश्वमेधैश्च यष्टव्यं बहुभिः स्वाप्तदक्षिणैः।
तेन लोकानवाप्नोति पुरुषोऽद्भुतदर्शनान् ॥११॥
(म. भा. शा. १२९)

'पारियात्र पर्वतके समीप गौतमका विशाल आश्रम था। गौतम उसमें रहता था। उस महामुनिकी उग्र तपस्या देखकर लोकपाल यम उनके निकट गया और उस समय गौतम ऋषिको अत्यन्त कठोर तपश्चर्या करनेमें तत्पर देखा। तपस्वी ब्रह्मर्षि गौतम तेजयुक्त और प्रभावशाली यमको आया हुवा देखकर हाथ जोडकर उठकर खडे हुवे। धर्मराज यमने उन्हे देखतेही धर्मके अनुसार सत्कार करते हुवे उनसे पूछा " मैं आपका क्या कार्य करूं?"

गौतम बोले, " क्या करनेसे पुरुष मातापितासे उऋण होता है और किस प्रकार पवित्र तथा दुर्लभ लोगोंको प्राप्त करता है?

यम बोले, ' तपस्या और पवित्र आचारयुक्त तथा नियम और सत्य धर्ममें रत पुरुष सदा मातापिताकी पूजा करके उनका उऋण होता है। तथा बहुतसी दक्षणासे युक्त अश्वमेध यज्ञ करनेसे अद्भुत तथा दुर्लभ लोगोंको प्राप्त है।'

गौतमके उदार स्वभावके विषयमें नारदीय महापुराणमें एक कथा उपलब्ध है।

तपस्यन्तो मुनेस्तस्य द्वादशाब्दमवर्षणम् ॥
बभूव घोरं विधिजे सर्वसत्त्वक्षयंकरम् ॥ ६ ॥
तस्मिन्नुग्रे तु दुर्भिक्षे क्षुत्क्षामा मुनयोऽखिलाः।
नाना देशेभ्य आयाता गौतमस्याश्रमं शुभम् ७
चक्रुर्विज्ञापनं तस्य गौतमस्य तपस्यतः।
देहि नो भोजनं येन प्राणास्तिष्ठन्ति वर्ष्मसु ॥८॥

गौतम उवाच—

तिष्ठध्वं मुनयः सर्वे ममाश्रमसमीपतः।
भोजनं नः प्रदास्यामि यावद्दुर्भिक्षमाद्गताः ॥१०॥
(ना. म. पु. उ. ७२)

गौतम गोदावरीके उगमके निकट त्र्यंबकेश्वरके समीप तप करते रहे, तब एक बार बारह वर्षोंतक अकाल पडा। चारों ओर हाहाकार मचा। उस दुर्भिक्षके कारण क्षीण हो गये हुवे मुनिगण नाना देशोंसे गौतमके आश्रमको आ गये। उन्होंने तप करनेवाले गौतमसे कहा, ' ऋषिवर्य, हमें अन्न देकर हमारे प्राणोंकी रक्षा करो।"

गौतम बोले, ' चिन्ता करनेका कारण नहीं है । जबतक अकाल रहेगा तबतक आप सब मेरे निकट रहिये । मैं आपके भोजनादिका प्रबंध करूंगा । '

बारह वर्षोंतक मुनिगण वहीं रहे । वर्षा होकर पृथ्वी धान्यादिसे संपन्न होनेपर प्रसन्न चित्तसे गौतमकी शुभ कामना करते हुवे वे वहांसे अपने अपने देश गये ।

इस स्थानमें गौतमको मायादेवीका पुत्र कहा है । विचारक इस नामके बारेमें विचार करें ।

गौतम एक धर्मशास्त्रकार थे । वे सामवेदकी राणायणी शाखाके नौ उपशाखाओंमें एक शाखाके अनुयायी थे । लाट्यायनीय श्रौतसूत्रमें—

उत्तमयोरिति गौतमः ॥१७॥

इस सूत्रकी टीका करते हुवे गौतमको आचार्य कहा है । सामवेदके गोभिल गृह्यसूत्रमें भी कई जगह गौतमका नाम आया है । गौतमस्मृति गद्यमय ग्रन्थ है । इसमें स्वयं ग्रन्थकारने किया हुवा अथवा अन्य किसीका एक भी श्लोक नहीं है। इस ग्रन्थके अट्ठाईस भाग हैं । कलकत्तामें छपी हुई गौतमस्मृतिमें उनतीस भाग हैं । परन्तु हरदत्तकी मिताक्षरामें इस उनतीसवे भागका उल्लेख न होनेसे संभवतः वह भाग प्रक्षिप्त है ।

गौतम धर्मसूत्रमें व्यवहार, उपनयनादि संस्कार, विवाह तथा उसके प्रकार, प्रायश्चित्त, राजधर्म, स्त्रियोंके कर्तव्य, नियोग, महापातक तथा उपपातक, उनके प्रायश्चित्त, कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र इत्यादिका विचार किया हुवा है । तथा इसमें संहिता, ब्राह्मण, पुराण इत्यादि ग्रंथोंके उल्लेख कई जगह किये हैं ।

बौधायन धर्मसूत्रमें गौतम धर्मशास्त्रका उल्लेख पहलीबार किया हुवा पाया जाता है । वसिष्ठ धर्मशास्त्र, अपरार्क, तंत्रवार्तिक, शांकरभाष्य, इत्यादिमें भी गौतम धर्मशास्त्रका उल्लेख पाया जाता है । मनुस्मृतिमें गौतमका—

शूद्रावेदी पतत्यत्रेरुतथ्यतनयस्य च ।

इस प्रकार उतथ्यतनय इस नामसे उल्लेख किया हुवा है। भविष्य पुराणमें भी एक जगह गौतमका सुरापानका निषेध करनेवाला करके उल्लेख है । गौतमका नाम वसिष्ठ तथा बौधायनके ग्रन्थोंमें आनेसे यह प्रतीत होता है कि गौतम वसिष्ठ और बौधायनके पूर्व कालीन होंगे । कई सज्जनोंका मत है कि गौतम धर्मशास्त्रमें ' यवन ' शब्दका उपयोग किया हुवा दिखाई देता है । और भारतको ' यवन ' शब्दका परिचय अलक्झन्दरके आक्रमणके बाद (खिस्ताब्दपूर्व ३२२ वर्ष) होनेसे गौतमका काल इस आक्रमण कालके बाद मानना पडता है । परन्तु यह मत असंगत है । स्वयं गौतमही यवन शब्दका अर्थ ' क्षत्रिय और शूद्रीके संयोगसे जन्म पाई हुई संतति ' ऐसा देते हैं । केवल ' यवन ' शब्दपरसे गौतमका काल निश्चय करना योग्य नहीं है । तथापि कई ऐसा मानते हैं कि खि. पू. ६००–७०० वर्षके मध्यमें यह गौतम काल होना संभवनीय है पर यह भी विवादास्पद है। गौतम धर्मसूत्रपर हरदत्तने मिताक्षरा नामक टीका, और मस्करी तथा असहाय इन दो विद्वानोंने भाष्य लिखे हैं । परन्तु ये तीनों अर्वाचीन ग्रंथ हैं । मिताक्षरा, स्मृतिचन्द्रिका इत्यादि ग्रन्थोंमें **श्लोक गौतम**, और अपरार्क तथा दत्तक मीमांसामें **बृहद्गौतम** और **वृद्धगौतम**का उल्लेख है । जीवानन्दने १७०० श्लोकोंकी गौतमस्मृति प्रकाशित की है । श्रीकृष्णने धर्मराजको चातुर्वर्ण्य-धर्म-व्यवस्था कहनेके लिये वह स्मृति कथन की, ऐसा उस स्मृतिके उल्लेखपरसेही ज्ञात होता है । परन्तु संभवतः वह स्मृति महाभारतके आश्वमेधिक पर्वसे ली गई होगी । क्योंकि पराशरमाधवीय तथा अन्य कई ग्रन्थोंमें इस स्मृतिके श्लोक आश्वमेधिकपर्वसे लिये हुवे हैं । गौतमके नामपर और भी आन्हिकसूत्र, पितृमेधसूत्र, दान चन्द्रिका, न्यायसूत्र, गौतमी शिक्षा इत्यादि ग्रंथ उपलब्ध हैं । पर ये सब वैदिक कालके गौतम ऋषिके हैं ऐसा कहना कठिन है ।

अब कुछ अन्य गौतमोंका वर्णन करते हैं—

द्वितीय गौतम— इस गौतमके बारेमें महाभारतके शल्य पर्वमें—

आसन्पूर्वयुगे राजन्मुनयो भ्रातरस्त्रयः ॥७ ॥
एकतश्च द्वितश्चैव त्रितश्चादित्यसन्निभाः ॥८॥
तेषां तु तपसा प्रीतो नियमेन दमेन च ॥९॥
अभवद्गौतमो नित्यं पिता धर्मरतः सदा ॥१०॥
(म. भा. श. ३६)

' पूर्वकालमें सूर्यके सदृश तेजस्वी ऐसे एकत, द्वित तथा त्रित ये तीन बन्धु थे । उनके पिताका नाम गौतम था, ' ऐसा उल्लेख है ।

तृतीय गौतम— इस गौतमको चिरकारी नामक पुत्र था ।

उस पुत्रको गौतमने अपनी दुराचारी माताका वध करनेको कहा। परन्तु चिरकाली विचारवान् होनेके कारण उसके हाथसे यह काम न हो सका। यह कथा महाभारत शान्तिपर्वके २६६वे अध्यायमें विस्तारसे कही हुई है।

चतुर्थ गौतम— इस गौतमके बारेमें भागवतमें-

मध्वादिषु द्वादशसु भगवान्कालरूपधृक्।
लोकतन्त्राय चरति पृथग्द्वादशभिर्गणैः ॥३२॥
घृताची गौतमश्चेति तपोमासं नयन्त्यमी ॥३९॥
(भा. १२।११)

अर्थात् 'गौतमादि भगवान् सूर्यके साथ भिन्नभिन्न मासोंमें भ्रमण करते हैं' ऐसा कहा है।

पञ्चम गौतम- महाभारतके शान्तिपर्वमें १६८ से लेकर १७३ तक एक दुराचारी गौतमकी कथा विस्तारसे कही हुई है।

षष्ठ गौतम- यह गौतम अत्रिकुलका एक ब्रह्मर्षि था। इसके बारेमें नीचे लिखी हुई कथा पाई जाती है।

एक बार अत्रि ऋषि वैन्य राजाके यज्ञमें जाकर उसकी स्तुति करने लगे।

अत्रिरुवाच—

राजन्धन्यस्त्वमीशश्च भुवि त्वं प्रथमो नृपः ॥१३॥

'हे राजन्, तुम धन्य हो। तुम ईश्वर सदृश हो। पृथ्वीपर पाहिले राजा तुमही हो।'

तब उस यज्ञमें बैठे हुवे गौतम-नामा ऋषि क्रुद्ध होकर उन्हें बोले-

मैवमत्र पुनर्ब्रूया न ते प्रज्ञा समाहिता।
अत्र नः प्रथमं स्थाता महेन्द्रो वै प्रजापतिः ॥१५
(म. भा. व. १८५)

'तुम अधिक दक्षिणा पानेके लिये राजाकी स्तुति कर रहे हो। हमारे आदिराजा इन्द्र हैं, वेही प्रजापति हैं। तुम ऐसे वचन फिर मत कहो। मेरी समझसे तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है।' इस प्रकार दोनोंमें चर्चा छिडनेपर अन्तमें सनत्कुमारने इनका समाधान किया।

सनत्कुमारने कहा-

राजा वै प्रथितो धर्मः प्रजानां पतिरेव च।
स एव शक्रः शुक्रश्च स धाता स बृहस्पतिः॥ १६
(म. भा. व. १८५)

'राजाही धर्म तथा प्रजापति है। इसीको इन्द्र, शुक्र, धाता, बृहस्पति इत्यादि नामोंसे पुकारते हैं। अत एव जो राजाकी स्तुति करता है, उसकी निन्दा न करनी चाहिये।' सनत्कुमारका यह वचन सुनकर गौतम ऋषि चुप हुए।

इस गौतमका उल्लेख और एक जगह उपलब्ध है। सावित्रीके पति सत्यवान्के पिता द्युमत्सेन अपने पुत्रके मृत्युकी आशंका कर शोक कर रहे थे। उन्हें समझाते हुवे गौतमने कहा—

अनेन तपसा वेद्मि सर्वं परिचिकीर्षितम्।
सत्यमेतन्निबोधध्वं ध्रियते सत्यवानिति ॥१३॥
(म. भा. व. २९८)

'अर्थात् मैं अपने तपो बलसे भविष्य तथा वर्तमान देख रहा हूं। आप विश्वास कीजिये कि सत्यवान् जीवित है।' आखरीं गौतमके भविष्यके अनुसार सत्यवान् वापस लौट आ गये।

गौतम और अहल्या

गौतम ऋषि और अहल्याकी कथा वाल्मीकीय रामायणमें तथा अन्यान्य पुराणोंमें है। प्रायः प्रत्येक पुराणमें इस कथामें न्यूनाधिक मिलता है। हमें इस लेखमें इस कथाका विचार करना नहीं है, इसलिये यह कथा कहां आयी है, उस स्थानके पते हम यहां देते हैं—

१ वाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड, सर्ग ४८; स. ४९ उत्तर-काण्ड स. २७;
२ लिंगपुराण अ. २९
३ गणेशपुराण १।३०; १।३१
४ ब्रह्मपुराण २।१६।१-४८
५ पद्मपुराण सृ. ५५
६ स्कन्दपुराण
७ अध्यात्मरामायण, बाल. ५
८ आनंदरामायण स. ३
९ षड्विंश ब्राह्मण (१।१), ताण्ड्य ब्राह्मण (२६।१)

इतने स्थानोंपर अहल्या और गौतमकी कथाएं हैं। गौतम ऋषि तपस्यामें मग्न रहते थे। इनका विवाह तरुणी सुन्दरी अहल्याके साथ हुआ। विवाह होनेपर भी वे तपस्यामेंही मग्न रहते थे।

एक बार ये तपस्याके लिये बाहर गये थे, उस समय इनके आश्रममें इन्द्र आया। वहां अकेली अहल्या थी। गौतम ऋषि वहां नहीं थे, अपने तप करनेके स्थानमें गये थे। इन्द्र और अहल्याकी बातचीत हुई और इन्द्रका संबन्ध अहल्यासे हुआ। वा० रामायणका कहना है कि यह गौतम नहीं है और इन्द्र है, यह जानकर अहल्याने इन्द्रके साथ संबंध किया। और पश्चात् "मैं सन्तुष्ट हुई हूं, अतः तुम इस मार्गसे जाओ, गौतम आनेका समय हुआ है' ऐसा भी कहा। अन्य ग्रन्थोंमें इससे विभिन्न कथा है। पश्चात् गौतम अपने आश्रममें आये और जो हुआ वह जानकर उसने अहल्याका त्याग कर तप करनेके लिये किसी दूसरे स्थानपर गये।

पश्चात् श्रीरामचन्द्रजी आये और उन्होंने उसकी शुद्धि की और वह गौतम ऋषिके साथ पुनः प्रेमसे रहने लगी।

इस कथाका तात्पर्य यह है, कि तपश्चर्या करनेवाला पुरुष तरुणी सुन्दरी युवतीसे विवाह न करें, और यदि करें, तो उसको गृहस्थ धर्मसे रहकर सन्तुष्ट करता रहे और उतनाही समय तपस्याके लिये दे कि जिससे अपनी धर्मपत्नीको कुकर्म करने तक संयम करनेका भार सहनेकी आपत्ति न भोगनी पड़े। मनके कामादि विकार बड़े प्रबल रहते हैं और दबाने पर भी अवसर आनेपर भडक उठते हैं। इसलिये पतिका ही यह उत्तरदायित्व है, यह बतानेके लिये वा० रामायणमें यह कथा इस तरह दी है।

घरमें सुन्दरी युवती रखकर यह गौतम ऋषि तपस्यामें मग्न रहता है। संयम करनेपर भी अहल्यासे समयपर प्रमाद हुआ। अर्थात् यह अपराध गौतमका था, ऐसा वा०रामायणका अभिप्राय है। अन्य पुराणोंमें कुछ अन्य प्रकारसे यह कथा लिखी है।

गौतमका परिचय होनेके लिये यह इतनी ही कथा पर्याप्त है। षड्विंश ब्राह्मणमें गौतमको देव सेनाका सेनापति बताया है। और युद्ध करते करते थकने पर वे किसी जगह विश्राम तथा निद्रा लेने लगे और सेना-संचालन इन्द्र करने लगा। ऐसी अवस्थामें इन्द्र और अहल्याका संबंध हुआ। यहां तपका नामतक नहीं है। कुछ भी हो, यहां इतना सत्य है कि वा० रामायण और ब्राह्मण ग्रंथोंमें कथा आने इतना गौतम अतिप्राचीन है।

इस तरह गौतम ऋषिके विषयमें महाभारत, रामायण तथा पुराणोंमें वर्णन है। पाठक इसका मनन करें। इस वर्णनके देखनेसे अनेक गौतम थे यह बात स्पष्ट हो जाती है। इनमें जो प्राचीन थे वेही वैदिक गौतम हैं ऐसा मानना योग्य है।

औंध जि. सातारा	निवेदन कर्ता
	श्रीपाद दामोदर सातवळेकर
१।११।४६	अध्यक्ष स्वाध्याय-मण्डल

ऋग्वेदका सुबोध भाष्य

गो त म ऋ षि का द र्श न

(ऋग्वेदमें तेरहवाँ अनुवाक)

अग्नि-प्रकरण

(१) अग्रणीके कर्तव्य

(ऋ. १।७४) गोतमो राहूगणः । अग्निः । गायत्री ।

उपप्रयन्तो अध्वरं मन्त्रं वोचेमाग्नये । आरे अस्मे च शृण्वते १
यः स्नीहितीषु पूर्व्यः संजग्मानासु कृष्टिषु । अरक्षद् दाशुषे गयम् २
उत ब्रुवन्तु जन्तव उदग्निर्वृत्रहाजनि । धनंजयो रणेरणे ३
यस्य दूतो असि क्षये वेषि हव्यानि वीतये । दस्मत् कृणोष्यध्वरम् ४
तमित् सुहव्यमङ्गिरः सुदेवं सहसो यहो । जना आहुः सुबर्हिषम् ५
आ च वहासि ताँ इह देवाँ उप प्रशस्तये । हव्या सुश्चन्द्र वीतये ६

अन्वयः– १ अध्वरं उपप्रयन्तः अस्मे आरे शृण्वते च अग्नये मन्त्रं वोचेम ॥

२ यः स्नीहितीषु संजग्मानासु कृष्टिषु पूर्व्यः दाशुषे गयं अरक्षत् ॥

३ उत जन्तवः ब्रुवन्तु-रणेरणे धनंजयः वृत्रहा अग्निः उत् अजनि ॥

४ यस्य क्षये दूतः असि, हव्यानि वीतये वेषि, अध्वरं दस्मत् कृणोषि ॥

५ हे अंगिरः सहसो यहो ! तं इत् सुहव्यं सुदेवं सुबर्हिषं जनाः आहुः ॥

६ हे सुश्चन्द्र ! प्रशस्तये, हव्या वीतये च, तां देवान् इह उप आ वहासि ॥६॥

अर्थ— १ हिंसारहित यज्ञके पास जाकर, हमारे कथन पाससे (अथवा दूरसे भी) सुननेवाले अग्निका (वर्णन करनेवाले) मन्त्र हम गायेंगे ॥

२ (वह) जो युद्ध करनेके लिये जानेवाले वीरोंमेंसे सबसे प्रथम दाताके घरको सुरक्षित रखता है ॥

३ निश्चयपूर्वक लोग कहें कि – प्रत्येक युद्धमें धनको जीतनेवाला और वृत्रनामक शत्रुका नाश करनेवाला अग्नि प्रकट हुआ है ॥

४ जिसके यज्ञगृहमें तू दूत बनकर रहता है, वहां हवि (देवोंके) खानेके लिये तू ले जाता है, और उसका हिंसारहित यज्ञ प्रेक्षणीय बनाता है ॥

५ हे अंगिरा और बलके लिये प्रसिद्ध अग्ने ! उसकोही उत्तम हविसे युक्त, उत्तम दिव्य तेजसे युक्त और उत्तम आसनोंसे युक्त (यज्ञ करनेवाला) सब लोग कहते हैं ॥

६ हे उत्तम दीप्तिमान् ! स्तुतिके लिये और हवि भक्षण करनेके लिये, उन सब देवोंको यहां ले आओ ॥

न योरुपब्दिरश्व्यः शृण्वे रथस्य कच्चन । यदग्ने यासि दूत्यम् ७
त्वोतो वाज्यह्रयोऽभि पूर्वस्मादपरः । प्र दाश्वाँ अग्ने अस्थात् ८
उत द्युमत् सुवीर्यं बृहदग्ने विवाससि । देवेभ्यो देव दाशुषे ९

७ हे अग्ने ! यत् दूत्यं यासि, रथस्य योः अश्व्यः कच्चन उपब्दिः न शृण्वे ॥

८ हे अग्ने ! दाश्वान् त्वोतः वाजी अह्रयः पूर्वस्मात् अपरः अभि प्र अस्थात् ॥

९ हे देव अग्ने ! देवेभ्यः दाशुषे द्युमत् उत बृहत् सुवीर्यं विवाससि ॥

७ हे अग्ने ! जब तू दूतकर्म करनेके लिये जाता है, तब तुम्हारे रथके अथवा घोडोंके गमनका कोई भी शब्द सुनाई नहीं देता है ॥

८ हे अग्ने ! जब दाताको तेरी सुरक्षा प्राप्त हुई, तब वह बलवान् बना और उसकी हीन अवस्था हट गयी, तथा वह पहिली अवस्थासे उच्च अवस्थामें पहुंच चुका (ऐसा समझना चाहिये।)

९ हे अग्निदेव ! देवोंके लिये जो हवि देता है उस दाताके लिये तू तेजस्वितासे युक्त बडा प्रभावी वीर्य देता है

अग्रणी क्या करे ?

अग्नि अग्रणी है, क्योंकि वह जो कार्य शुरू करता है वह अग्रतक, अन्ततक (अग्रं नयति) पहुंचाता है, बीचमें नहीं छोडता। अग्निके जो कर्तव्य यहां कहे हैं वे समाज या राष्ट्रमें अग्रणीके कर्तव्य हैं, देखिये इस दृष्टिसे इस सूक्तका आशय क्या होता है। यह टिप्पणी पूर्वोक्त मंत्रोंके क्रमसेही देखनी चाहिये —

१ हे अग्रणे ! तू (अपने अनुयायियोंके) जो हिंसारहित कार्य होंगे उनमें जा, और समीपसे अथवा दूरसे उनके कथनोंको सुन, (और उनके कष्टोंको दूर करनेका यत्न कर।

२ जो वीर युद्ध करनेके लिये जाते हैं, उनमें जो दाता होंगे, अथवा उदार होंगे, उनके घरोंकी सुरक्षा सबसे प्रथम कर (और पीछेसे अन्योंकी सुरक्षा कर, इससे सब वीर उदार बनेंगे और उनमें कोई स्वार्थतत्पर नहीं रहेगा।)

३ (तुम्हें देखकर) सब लोग यही कहें की युद्धोंमें निःसंदेह विजय प्राप्त करनेवाला और शत्रुका समूल नाश करनेवाला (यह अग्रणी अपने प्रभावसेही इन लोकोंमें) प्रकट हुआ है।

४ जिन लोगोंके सत्कर्ममें तू सहायक होता है, उनके उन कर्मोंसे सब दिव्य विबुधोंको योग्य भोग मिलते हैं और उनके सभी हिंसारहित कर्म दर्शनीय तथा चित्ताकर्षक होते हैं।

५ हे अंगप्रत्यंगको बलवान् बनानेवाले और बलके कार्योंके किये ही उत्पन्न हुए वीर ! (जो पूर्वोक्त प्रकार प्रशस्ततम कर्म करता है।) उसीको उत्तम हविष्यान्न देनेवाला, उत्तम तेजस्वी और उत्तम सत्कार्य करनेवाला (सब लोग) कहते हैं।

६ हे तेजस्वी अग्रणे ! तू उत्तम दिव्य विबुधों, ज्ञानियोंको यहां बुला ले आ, हम उनका वर्णन करेंगे (अथवा उनका उपदेश सुनेंगे) और उनको उत्तम अन्न अर्पण करेंगे। (अग्रणीका कर्तव्य है कि वह ज्ञानियोंको इकठ्ठा करे और उनके दिव्य उपदेश जनताको सुनावे।)

७ अग्रणी जनताकी सहायता ऐसी गुप्ततासे साथ करे की किसीको भी यह पता न लगे कि यह आज कहां गया और इसने इसकी सहायता इस रीतिसे की। (किसीको पता न लगे ऐसी गुप्त रीतिसे वह अनुयायियोंके पास जावे और उनकी सहायता करे।)

८ हे अग्रणे ! अपने अनुयायियोंमें जो दाता हों उनकी ऐसी सहायता कर कि जिससे वे बलवान् बनें, उनकी हीनदीन अवस्था पूर्ण रीतिसे दूर हो, और वे पूर्वकी अपेक्षा अधिक अच्छी स्थितिमें पहुंच जांय। किसी भी तरह उनकी अवस्था अधिक दीन न बने, पर अधिक उच्च और श्रेष्ठ बने।

९ हे अग्रणे ! देवोंके लिये जो अर्पण कर देते हैं, उन दाताओंके लिये दिव्य तेज और विजयी वीर्य प्राप्त हो।

पाठक इस भावार्थको पूर्वोक्त मंत्रों और उनके अर्थोंके साथ पढें और जानें कि अग्निके मंत्रोंमें किस ढंगसे अग्रणीके कर्तव्य बताये हैं। अब इन मंत्रोंमें जो बोधवचन हैं उनका थोडासा विचार करते हैं —

बोधवचन

इस सूक्तमें जो बोधवचन हैं वे यहां दिये जाते हैं—

१ अ-ध्वरं उपप्रयन्तः (मं. १) = जिस काममें हिंसा, कुटिलता या कपट नहीं है, वह कार्य करनेके लिये मनुष्य जांय। अर्थात् हिंसायुक्त कार्य कोई न करे, छल कपटके भी काम कोई न करे।

२ शृण्वते मन्त्रं वोचेम = जो सुनता है उसीको मननीय उपदेश करेंगे। अर्थात् सुनानेपर भी जो नहीं सुनता उसको कहना व्यर्थ है।

३ स्त्रीहितीषु संजग्मासु कृष्टिषु गयं अरक्षत् (२) = लोग घोर संग्रामके युद्धकार्यमें लग जानेपर उनके घर-बारकी सुरक्षा करनी चाहिये। यह राजका कार्य है। राज्य-व्यवस्थापकोंको उचित है कि वे युद्ध करनेके लिये गये सैनि-कोंके घरबारकी सुरक्षा करें। इससे युद्ध करनेवाले सैनिकोंको युद्ध करनेके लिये बडा उत्साह आयेगा और इससे राज्यका बल बढेगा।

४ रणे रणे धनंजयः अजनि, जन्तवः ब्रुवन्तु (३) = प्रत्येक युद्धमें धनको जीतनेवाला वीर (इस कुलमें) जन्मा है, ऐसा वर्णन सब मानव करें, ऐसा पराक्रम करना चाहिये।

५ अध्वरं दस्मत् कृणोषि (४) = हिंसारहित कर्मको तू सुन्दर बना दे। मनुष्य हिंसारहित कर्म करे और वह अत्यंत सुन्दर बनावे। जहांतक हो सके वहांतक जो कर्म करना हो वह सुन्दर बनावे। किसी तरह उसमें न्यूनता न रहने दें।

६ यस्य क्षये दूतः असि, हव्यानि वीतये वेषि (४) = जिसके घरमें दूत होकर तू रहता है, उनके खानेके लिये तू हविष्यान्न पहुंचाता है। दूतके कर्तव्यका वर्णन यहां है। यह दूत घरेलु (क्षये दूतः) दूत है। जो दिनरात घरमें रहता है और अपना कर्तव्य करता है।

७ आङ्गिरः सहसो यहो ! [अङ्ग-रस-वान् बलस्य प्रवर्तकः (५)] = अङ्गोंमें एक प्रकारका जीवनरस है, इसी रससे शरीर जीवित और उत्साहमय रहता है। इस अंग-रस-विद्याके प्रवर्तक ऋषिका नाम " अङ्गिरस् " है। इस अंगी-यरसको यमनियमानुसार बलवान् करनेवाले बलवान् होते हैं। ' सहस् ' का अर्थ शारीरिक बल, साहस करनेका उत्साह जिससे होता है वह ' सहः ' है। ' यहु ' का अर्थ ' प्रवर्तन करनेवाला, चलानेवाला, प्रेरक, पुत्र ' है।

८ जनाः सुहव्यं सुबर्हिषं सुदेवं आहुः (५) = सब लोक उत्तम दान देनेवाले, उत्तम यज्ञ (प्रशस्त कर्म) के कर्ता और देवके उत्तम भक्तका वर्णन करते है। ' सु-बर्हिः ' का अर्थ ' उत्तम आसन देकर अतिथिका सत्कार करनेवाला '। ' सु-हव्यः ' का अर्थ उत्तम पवित्र हविष्यान्नका दान करनेवाला और ' सु-देवः ' ईश्वरकी उत्तम रीतिसे भक्ति करनेवाला। ये सब प्रशंसाके योग्य हैं।

९ देवान् प्रशस्तये, वीतये च इह उप आ वहासि (६) = तुम उन सब देवोंको प्रशंसापूर्वक अन्नप्रदान करनेके लिये यहां ले आते हो। ज्ञानदेव, वीरदेव, धनदेव और कर्म-देव ये चातुर्वर्ण्यमें देव हैं, उनमें जो श्रेष्ठ हैं उनकी प्रशंसा करनी चाहिये और उनको उत्तम भोग भी मिलने चाहिये, इसलिये उनको आदरसे निमंत्रण देना योग्य है।

१० यत् दूत्यं यासि, रथस्य योः अश्व्यः उप ब्दिः न शृण्वे (७) = जब तू दूतकर्म करनेके लिये जाता है, तब तुम्हारे रथका तथा उनके घोडोंका शब्द भी सुनाई नहीं देता। अर्थात् दूतकर्म करनेके लिये जब दूत जावे, तब उसका पतातक किसीको न लगे, वह चुपचाप वहां जाय, चुपचाप वहांके हालका पता लेवे और चुपचाप वापस आय। राजदूतके लिये विशेषतः ऐसी गुप्तता रखना आवश्यक है।

११ दाश्वान् त्वोतः वाजी अह्रयः पूर्वस्मात् अपरः अभि प्र अस्थात् (८)- दाता मनुष्य प्रभुकी सुरक्षासे सुरक्षित होकर तथा निर्भय होकर पहिलेसे भी अधिक श्रेष्ठ स्थिति प्राप्त करता है। मनुष्य अपने धनका दान करे, प्रभुकी सुरक्षा प्राप्त करे, जो निःस्वार्थ कर्मसे प्राप्त होती है। इससे उसकी उन्नति होती है।

१२ बृहत् द्युमत् सुवीर्यं विवाससि (९)- बडा तेजस्वी उत्तम वीर्य, शौर्य, प्रभावी सामर्थ्य या पराक्रम करनेकी शक्ति देता है, बढाता है। तेजस्वी वीर्य चाहिये। जिससे प्रशंसनीय कर्म होते हैं वह तेजस्वी वीर्य हैं।

यह प्रथम सूक्तका विवरण है। इस विवरणमें बताया है कि मन्त्रोंके छोटे छोटे विभाग किस तरह मानवधर्मका प्रकाश करते हैं। अब द्वितीय सूक्त देखिये--

(२) लोगोंका प्रियमित्र

(ऋ. १।७५) गोतमो राहूगणः । अग्निः । गायत्री ।

जुषस्व सप्रथस्तमं वचो देवप्सरस्तमम् । हव्या जुह्वान आसनि १
अथा ते अङ्गिरस्तमाग्ने वेधस्तम प्रियम् । वोचेम ब्रह्म सानसि २
कस्ते जामिर्जनानामग्ने को दाश्वध्वरः । को ह कस्मिन्नसि श्रितः ३
त्वं जामिर्जनानामग्ने मित्रो असि प्रियः । सखा सखिभ्य ईड्यः ४
यजा नो मित्रावरुणा यजा देवाँ ऋतं बृहत् । अग्ने यक्षि स्वं दमम् ५

अन्वयः— १ (हे अग्ने !) आसनि हव्या जुह्वानः सप्रथस्तमं देवप्सरस्तमं वचः जुषस्व ॥

२ हे अङ्गिरस्तम वेधस्तम अग्ने ! अथ ते सानसि प्रियं ब्रह्म वोचेम ॥

३ हे अग्ने ! जनानां कः ते जामिः ? दाशु-अध्वरः कः ? कः ह (त्वं ?) कस्मिन् श्रितः असि ? ॥

४ हे अग्ने ! त्वं जनानां जामिः, प्रियः मित्रः असि । सखिभ्यः ईड्यः सखा (असि) ॥

५ हे अग्ने ! नः मित्रावरुणा यज । देवान् यज । बृहत् ऋतं (यज)। स्वं दमं यक्षि ॥

अर्थ— १ (हे अग्ने ! अपने) मुखमें हविष्यान्नका स्वाद लेता हुआ (तू), अत्यंत प्रख्यात (अथवा विस्तृत भावपूर्ण) और देवोंको अत्यंत प्रिय (मन्त्ररूप) वचनका स्वीकार कर।

२ हे अङ्गिरसोंमें प्रमुख अत्यंत ज्ञानी अग्निदेव ! अब तेरे लिये सेवन करनेयोग्य ऐसा प्रिय स्तोत्र हम कहेंगे ॥

३ हे अग्ने ! मानवोंके मध्यमें कौन तेरा बंधु है ? दातृत्वसे यज्ञ करनेवाला कौन है ? (तू) कौन है ? और तू कहां रहता है ?

४ हे अग्ने ! तू लोगोंका बन्धु है, (तू लोगोंका) प्रिय मित्र है, मित्रोंके लिये वर्णन करनेयोग्य मित्र (तू है) ॥

५ हे अग्ने ! हमारे लिये मित्र और वरुणका यज्ञ कर। देवोंका यजन कर। बडा यज्ञ कर। और अपने घरमें यज्ञ कर

जनताका प्रियमित्र अग्रणी

अग्नि अग्रणी है, अग्रणी वह है कि जो प्रारंभ किया कर्म अन्ततक पहुंचाता है, अनुयायियोंकी अन्ततक साथ करता है, उनको बीचमेंही नहीं छोडता। वह अग्रणी अग्निरूप तेजस्वी हो, दूसरोंको प्रकाश बताकर मार्ग बतानेवाला हो, गर्मी अर्थात उत्साहकी आग जलानेवाला हो और प्रगति करनेवाला हो। (अङ्गि-रसः-तमः) अंग प्रत्यंगोंमें जीवनरसकी समृद्धि करनेवाला और (वेधस्-तमः) ज्ञानी तथा नवीन वस्तु निर्माण करनेमें, नयी रचना करनेमें प्रवीण हो (मं. २)। यह अग्रणी (जनानां जामिः) सब मानवोंको बंधुके समान आप्त जैसा प्रतीत हो, सब जनताको (प्रियः मित्रः) प्रिय हितकारी मित्र जैसा प्रतीत हो, (सखिभ्यः ईड्यः सखा) सब मित्रोंमें भी अत्यंत प्रशंसायोग्य सखा है ऐसा सबको मालूम हो। समान भाव जिसके होते हैं वह सखा कहलाता है। (मं. ४)

(जनानां कः जामिः) जनतामें अपना कौन सच्चा मित्र है, यह मननपूर्वक देखना चाहिये। ' जामिः ' का अर्थ ' आप्त, बंधु, भाई, संबंधी ' है। जनतामें आप्त पुरुष कौन है, यह परीक्षापूर्वक देखना चाहिये । (दाशु-अध्वरः कः) अहिंसा छल कपटरहित कर्म करनेवाला, दाता जनतामें कौन है ? यह भी विवेकपूर्वक देखना चाहिये। (कः) जो मनुष्य मिलेगा वह कौन है इसका ठीक ठीक ज्ञान प्राप्त करना चाहिये यह ज्ञान निश्चित रूपसे प्राप्त होगा तोही इसका परिणाम अच्छा होगा। (कस्मिन् श्रितः) इसका आश्रय कौनसा है ? किसके आधारसे यह रहता है, यह भोग भोगता है वह किसके आधारसे है, इसका पता लगाना चाहिये। जनताका मित्र कौन है ? कपटरहित कर्म कौन करता है ? यह मनुष्य कौन है, क्या करता है, किस आश्रयपर रहता है, ये प्रश्न पूछकर हर-एक मानवकी पहचान करनी चाहिये। इस कसौटीसे जो उत्तम समझा जायगा वही अग्रणी होनेयोग्य है (मं. ३)

(मित्र) हितकारी सखा, (वरुण = वरणीय) वरिष्ठ, श्रेष्ठ

(देवाः) ज्ञानदेव, वीर्यदेव धनदेव और कर्मदेव अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इनका (यज) सत्कार करना चाहिये। (स्वं दमं) अपने घरकी सुरक्षा करना चाहिये। यजनमें सत्कार-संगति-दानरूप त्रिविध कर्म है, वही पूर्वोक्त देवों और विशेषतः अपने घरके विषयमें करना आवश्यक है। अपना घर जैसा घर है वैसाही नगर, प्रान्त, देश और राष्ट्र भी अपना घरही है। गृहयज्ञमें घरसे राष्ट्रतक सबका सत्कार होता है। (५)

जो अग्रणी ऐसा हो वही जनतामें प्रमुख स्थानमें सत्कार करनेयोग्य है। उसीकी प्रशंसा सब करें। (१)

यज्ञमें जो अग्निका स्थान है वही अग्रणीका राष्ट्रमें है। यहांका वर्णन इस दृष्टिसे देखनेसे मानवके सार्वजनिक धर्मका ज्ञान हो सकता है।

यहां द्वितीय सूक्तका विवरण समाप्त हुआ।

(३) न दबनेवाला वीर

(ऋ. १।७६) गोतमो राहूगणः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

का त उपेतिर्मनसो वराय भुवदग्ने शंतमा का मनीषा।
को वा यज्ञैः परि दक्षं त आप केन वा ते मनसा दाशेम १

एह्यग्न इह होता नि षीदादब्धः सु पुरएता भवा नः।
अवतां त्वा रोदसी विश्वमिन्वे यजामहे सौमनसाय देवान् २

प्र सु विश्वान् रक्षसो धक्ष्यग्ने भवा यज्ञानामभिशस्तिपावा।
अथा वह सोमपतिं हरिभ्यामातिथ्यमस्मै चकृमा सुदाव्ने ३

प्रजावता वचसा वह्निरासा ऽऽ च हुवे नि च सत्सीह देवैः।
वेषि होत्रमुत पोत्रं यजत्र बोधि प्रयन्तर्जनितर्वसूनाम् ४

अन्वयः— १ हे अग्ने ! का उपेतिः ते मनसः वराय भुवत् ? का मनीषा शंतमा (भवेत्)?, कः वा यज्ञैः ते दक्षं परि आप ? केन मनसा वा ते दाशेम ?

२ हे अग्ने ! आ इहि, होता (भूत्वा) इह नि षीद। नः अदब्धः पुरएता सु भव। विश्वमिन्वे रोदसी त्वा अवताम्। महे सौभगाय देवान् यज॥

३ हे अग्ने ! विश्वान् रक्षसः प्र सु धक्षि। यज्ञानां अभिशस्तिपावा भव। अथ सोमपतिं हरिभ्यां आ वह। अस्मै सुदाव्ने आतिथ्यं चकृम॥

४ प्रजावता वचसा आसा वह्निः आ हुवे च। इह देवैः नि सत्सि च। हे यजत्र ! होत्रं उत पोत्रं वेषि। वसूनां जनितः प्रयन्तः बोधि॥

अर्थ— १ हे अग्ने ! किस तरहकी उपासना तेरे मनको संतोष देगी ? कौनसी मनकी इच्छा (तेरे लिये) शांति देगी ? कौन भला यज्ञोंसे तेरे बुद्धिबलको प्राप्त करेगा ? किस मनोभावसे तुझे (हम) दान दें ?

२ हे अग्ने ! यहां आ, हवनकर्ता (होकर) यहां बैठ। हमारा न दबनेवाला उत्तम नेता बन। सर्वत्र पहुंचे द्यु और पृथ्वी लोक तेरी सुरक्षा करें। महान् उत्तम भाग्य प्राप्त करनेके लिये देवोंका यजन कर॥

३ हे अग्ने ! सब राक्षसोंको उत्तम रीतिसे जला दे। सब यज्ञोंका वर्णन करनेवाला हो। और सोमपान (करनेवाले इन्द्र) को घोडोंको जोतकर (रथमेंसे) यहां ले आ। इस उत्तमदाता (इन्द्र) के लिये आतिथ्यकी (सब तैयारी हमने) की है॥

४ (हमारी सब) जनताके अनुकूल वचनके साथ(मैं अपने) मुखसे इस अग्निका वर्णन करता हूँ। यहां देवोंके साथ आकर बैठ जा। हे यज्ञके योग्य देव ! हवन और पवित्रता तुम करता है। धनोंका उत्पादन और बटवारा (करनेका) ध्यान रख॥

यथा विप्रस्य मनुषो हविर्भिर्देवाँ अयजः कविभिः कविः सन् ।
एवा होतः सत्यतर त्वमद्याग्ने मन्द्रया जुह्वा यजस्व ॥ ५

५ कविः सन् कविभिः विप्रस्य मनुषः हविर्भिः यथा देवान् अयजः, (एवं) एव हे होतः सत्यतर अग्ने ! त्वं अद्य मन्द्रया जुह्वा यजस्व ॥

५ (तू) कवि होता हुआ, (अनेक) कवियोंके साथ (रहकर) ज्ञानी मनुष्यके हवियोंसे जैसा देवोंका यजन करता है, वैसाही हे होता सत्यस्वरूप अग्ने ! तू आज आनन्द-दायक चमससे (उन देवोंको हवि) अर्पण कर ॥

हमारा पुरोगामी वीर

इस सूक्तमें हमारा नेता, अग्रेसर, कैसा हो, वह उत्तम शब्दोंमें कहा है। "**नः पुरएता अ-दब्धः।** (मं. २) = हमारा नेता, अग्रणी, अगुवा, अग्रेसर अथवा हमारा पथप्रदर्शक, मार्गदर्शक, नायक (पुरः एता) अग्रभागमें रहकर सबका यथायोग्य संचालन करनेवाला (अ-दब्धः) कभी किसीसे न दब जानेवाला हो। 'अ-दब्धः' का अर्थ 'न दबाया हुआ, न दब जानेवाला, दूसरेके दबावमें न आनेवाला, किसीसे हिंसित न होनेवाला, किसीसे जखमी न हुआ हुआ'। हमारा वीर नेता ऐसा पुरोगामी हो और हम उसके अनुयायी बनें और उन्नत होते रहें।

"**महे सौभगाय देवान् यज** (२) = महान् सौभाग्यकी प्राप्तिके लिये सत्कार-संगति-दानात्मक प्रशस्ततम कर्म करो। यह यज्ञ देवोंकेही उद्देश्यसे होना चाहिये। असुरोंके लिये नहीं। देव वे हैं कि जो दैवी संपत्तिसे सुशोभित होते हैं।

इस तरहके नेताको आदरसे बुलाना चाहिये, उसको उत्तम आसन देना चाहिये और उसका अच्छी तरह सत्कार करना चाहिये। '**आ इहि, इह नि षीद**' (मं.२) = हे नेता, हे अग्रणी ! यहां हमारे पास आ, यहां इस आसनपर बैठ, तुम्हारा सत्कार हम करते है। **अस्मै आतिथ्यं चकृम** (मं. ३) = इसका हम बडा सत्कार करते हैं। यह सत्कार करनेकी रीति देखिये—

हे अग्रणे वीर !

१ **आ इहि** (२)— यहां आ,

२ **इह नि षीद**— यहां बैठ,

३ **अस्मै आतिथ्यं चकृम** (३)— इसका हम सत्कार करेंगे,

४ **इह नि सत्सि** (४)- यहां आरामसे बैठ जा,

५ **ते मनसः वराय का उपेतिः भुवत्** ? (१)- तेरे मनके संतोषके लिये हम तेरे साथ कैसा बर्ताव करें ?

६ **का मनीषा शंतमा?** (१)- कौनसी मनकी इच्छा तुझे शान्तिसुख देगी ?

७ **केन मनसा ते दाशेम** ? (१)- किस मनोभावसे हम तेरा सत्कार करें? किस भावसे तेरी भेंट करें?

८ **कः ते दक्षं परि आप?** (१)- कौन भला तेरे बुद्धि-बलको प्राप्त कर सकता है, क्या करनेसे तुम्हारा बल हमें प्राप्त होगा?

९ **विश्वान् रक्षसः प्र सु धक्षि** (३)- सब (घातक) राक्षसोंको ठीक तरह जला दे।

१० **देवान् यज** (२); **देवैः नि सत्सि** (४)- देवोंका यजन कर। देवोंके उद्देश्यसे प्रशस्त कर्म कर, क्योंकि तू देवोंके साथ रहता है। [पूर्वोक्त मंत्रमें 'राक्षसोंको जला दे' ऐसा कहा है और यहां देवोंके उद्देश्यसे उनकी प्रीतिके लिये शुभ कर्म कर ऐसा कहा है। राक्षसोंको दूर हटाना और दिव्य विबुधोंको अपने पास करना यहां स्पष्ट उद्देश्य है।]

११ **वसूनां जनितः प्रयन्तः, बोधि** (४)- तू अनेक प्रकारके धनोंको उत्पन्न करता है और उनका यथा-योग्य बटवारा करता है, इसलिये हमारी आवश्यकताका विचार कर, अर्थात् हमें आवश्यक धनादि दे।

१२ **होत्रं उत पोत्रं वेषि** (४)- तू दिव्य विबुधोंको बुलाना, उनके लिये अर्पण करना और उस कार्यके लिये आवश्यक पवित्रता करनेकी विधि जानता है।

१३ **कविः सन् कविभिः यजस्व** (५)- स्वयं ज्ञानी बनकर ज्ञानियोंके साथ प्रशस्त कर्म कर।

१४ **विप्रस्य मनुषः हविर्भिः देवान् अयजः** (५)- ज्ञानी मनुष्यके हविष्यान्नोंसे दिव्य विबुधोंका सत्कार कर।

१५ विश्वमिन्वे रोदसी त्वा अवताम् (२)- सब विश्व तेरी सुरक्षा करे, सब विश्व तेरी सहायता करे, अर्थात् तेरा विरोध कोई न करे।

१६ यज्ञानां अभिशस्तिपावा भव (३)- शुभकर्मोंकी प्रशंसा कर, किसीके दुष्ट कर्मोंकी स्तुति न कर, जिसके जितने शुभ कर्म होंगे, उसके उतनेही कर्मोंकी प्रशंसा कर। इससे शुभ कर्म करनेकी ओर जनताकी प्रवृत्ति होगी और सबका कल्याण ही होगा।

१७ प्रजावता वचसा आसा आ हुवे (४)- जनताकी अनुकूल संमतिके साथ मैं अपने मुखसे यह घोषणा कर रहा हूं। प्रजाकी संमतिकी अनुकूलता प्राप्त करना योग्य है।

ये सब मंत्र 'अग्नि' केही हैं। अग्निका एक सामाजिक रूप अग्रणी, पुरएता, नेता है। इसका वर्णन इन्हीं मन्त्रोंमें देखनेकी रीति ऊपर बताई है। इससे सामाजिक धर्मका बोध अच्छी तरह हो सकता है। मानवधर्मका बोध वेदमंत्रोंसे इस रीतिसे जाना जा सकता है। अग्निका वर्णन करते हुए, आतिथ्यसत्कार करनेकी रीति, नेताके दिव्य गुण कर्म स्वभाव, नेताके और अनुयायियोंके करनेयोग्य कर्म आदि सब किस ढंगसे जाने जा सकते हैं, यह इस स्पष्टीकरणमें बताया है।

यहां तृतीय सूक्तका विवरण समाप्त हुआ, अब चतुर्थ सूक्त देखिये —

(४) महारथी श्रेष्ठ वीर

(ऋ. १।७७) गोतमो राहूगणः। अग्निः। त्रिष्टुप्।

कथा दाशेमाग्नये काऽस्मै देवजुष्टोच्यते भामिने गीः।
यो मर्त्येष्वमृत ऋतावा होता यजिष्ठ इत् कृणोति देवान् १
यो अध्वरेषु शंतम ऋतावा होता तमू नमोभिरा कृणुध्वम्।
अग्निर्यद्वेर्मर्ताय देवान्त्स चा बोधाति मनसा यजाति २
स हि क्रतुः स मर्यः स साधुर्मित्रो न भूदद्भुतस्य रथीः।
तं मेधेषु प्रथमं देवयन्तीर्विश उप ब्रुवते दस्ममारीः ३

अन्वयः- १ अस्मै अग्नये कथा दाशेम ? अस्मै भामिने देवजुष्टा गीः का उच्यते ? यः अमृतः, (सः) ऋतावा यजिष्ठः होता मर्त्येषु देवान् इत् कृणोति ॥

२ यः अध्वरेषु शंतमः ऋतावा होता तं उ नमोभिः आ कृणुध्वम्। यत् अग्निः मर्ताय देवान् वेः, सः मनसा बोधाति, यजाति च ॥

३ सः हि क्रतुः, सः मर्यः, सः साधुः, मित्रः न, अद्भुतस्य रथीः भूत्। दस्मं आरीः देवयन्तीः विशः मेधेषु प्रथमं तं उप ब्रुवते ॥

अर्थ— १ इस अग्निके लिये हम किस रीतिसे अर्पण करेंगे ? इस तेजस्वी देवके लिये देवोंके सेवन करनेयोग्य ऐसा कौनसा स्तोत्र गायें ? यह अमर सत्यनिष्ठ और पूजनीय दाता (अग्नि) मानवोंमें सब देवोंको (स्थापन करके उनका) सत्कार करता है ॥

२ जो हिंसारहित शुभ कर्मोंमें शान्तिका और सत्यका प्रकाशक है, उसका हम नमस्कारोंसे सत्कार करते हैं। जब यह अग्नि मानवके हित करनेके लिये देवोंके पास पहुंचता है, तब वह (सब कुछ) मनसे जानता है (और वैसा) कर्म भी करता है ॥

३ वह कर्मकर्ता है, वही मर्त्य है, वही सत्पुरुष है, वह मित्र जैसा (सहायक) है, और वही अद्भुत रथपर चढनेवाला महारथी (वीर) है। इस दर्शनीय देवके पास पहुंचनेवाली और देवोंकी सेवा करनेकी उत्सुक प्रजाएँ, यज्ञोंमें सबसे प्रथम इस (अग्निकीही) स्तुति गाते हैं ॥

स नो नृणां नृतमो रिशादा अग्निर्गिरोऽवसा वेतु धीतिम् ।
तना च ये मघवानः शविष्ठा वाजप्रसूता इषयन्त मन्म ४
एवाग्निर्गोतमेभिर्ऋतावा विप्रेभिरस्तोष्ट जातवेदाः ।
स एषु द्युम्नं पीपयत् स वाजं स पुष्टिं याति जोषमा चिकित्वान् ५

४ नृणां नृतमः रिशादाः सः अग्निः नः गिरः अवसा धीतिं वेतु । च ये तना मघवानः शविष्ठाः वाजप्रसूताः मन्म इषयन्तः ॥

५ ऋतावा जातवेदाः अग्निः विप्रेभिः गोतमेभिः एव अस्तोष्ट । स एषु द्युम्नं पीपयत् । सः वाजं, सः पुष्टिं, (सः) जोषं आ चिकित्वान् याति ॥

४ मानवोंमे सबसे अधिक श्रेष्ठ, शत्रुओंका संहार करनेवाला वह अग्नि, हमारी प्रशंसाको (स्वीकार करता हुआ हमारी)सुरक्षा करके (हमारे इस) बुद्धिपूर्वक किये शुभ कर्मको प्राप्त हो। और जो बडे धनी बलिष्ठ और अन्नके दाता हैं, (वे जो) स्तोत्र प्रेरित करते हैं, (उनका भी स्वीकार करे)॥

५ सत्यनिष्ठ वेदप्रवर्तक अग्नि ज्ञानी गौतमोंके द्वारा प्रशंसित हुआ है। उसने इनको तेजस्वी धन दिया। उसने (इनको) अन्न, पुष्टि, प्रीति (दी, क्योंकि यह सब यह देव) जानता है, (और देनेके लिये)जाता है ॥

मानवोंमें श्रेष्ठ वीर

इस सूक्तमें मानवोंमें श्रेष्ठ महारथी वीरका वर्णन बडा देखनेयोग्य है। वह वर्णन देखिये —

१ **नृणां नृतमः** (मंत्र ४)– मानवोंमें अत्यंत श्रेष्ठ मनुष्य, अत्यंत श्रेष्ठ नेता, नेताओंका भी नेता, श्रेष्ठ संचालक,

२ **रिशादसः** (रिश्–अदसः)– शत्रुको खा जानेवाला, शत्रुका नाश करनेवाला, शत्रुका पूर्णतया नाश करनेवाला,

३ **अद्भुतस्य रथीः भूत्** (३)– अद्भुत रथमें विराजमान होनेवाला महारथी वीर, अपूर्व विजय कमानेवाला रथी।

४ **सः क्रतुः, मर्यः, साधुः, मित्रः** (३)– वह सतत, कर्म करनेवाला पुरुषार्थी है, वह समरभूमिमें मरनेके लिये सिद्ध हुआ वीर है, वह साधन करनेवाला सत्पुरुष है और जनताका वह मित्र है।

५ **सः मनसा बोधाति, यजाति च** (२)– वह मनसे सब ठीक तरह जानता है, और कर्तव्य यज्ञकर्म करता है। ज्ञानपूर्वक शुभकर्म करता है।

६ **सः अवसा धीतिं वेतु** (४)– वह सुरक्षा करने द्वारा धारणावती बुद्धिको प्राप्त करावे अर्थात् सबकी रक्षा करे, और धारणावती बुद्धिको देवे। 'धीति' का अर्थ सुविचार, शुभमति है।

७ **ऋतावा** (१,२,५),**जातवेदाः** (५)– वह सत्य कार्यका करनेवाला, सत्यनिष्ठ, वेदको अथवा धनको प्रकट करनेवाला है। **वेदस्** – धन, वेद, ज्ञान।

८ यह वीर (**अमिन्**। १) तेजस्वी है, (**अमृतः**)अमर है, अमर होनेयोग्य शुभ कर्म करता है, (यजिष्ठः) पूज्य, सत्कारके योग्य है।

९ **अध्वरेषु शंतमः** (२)– हिंसा, कुटिलता, छल, कपट रहित शुभ कर्मोंमें अत्यंत शान्ति फैलानेवाला।

१० **मर्ताय देवान् वेः** (२)– मनुष्यका हित करनेके लिये दिव्य विबुधोंकी सहायता प्राप्त करता है और उससे वह मनुष्यका हित करता है।

यह श्रेष्ठ वीरका वर्णन इस सूक्तमें है। अग्निके वर्णनके मिषसेही यह वर्णन किया गया है, यही इसमें कवित्व है। इस स्थानपर कवि इस अग्निमें महारथी श्रेष्ठ वीरका दर्शन कर रहा है। अतः यह सूक्त क्षात्रधर्मको प्रकट कर रहा है। इस शूरके अनुयायी कैसे हैं सो देखिये—

११ **तना, मघवानः, शविष्ठाः, वाजप्रसूताः, इषयन्तः** (४)– विस्तृत भाववाले अर्थात् संकुचित भावसे दूर रहनेवाले, धनवान्, बलिष्ठ, सामर्थ्यवान्, प्रभावशाली, बल और अन्न दानके लिये प्रसिद्ध, (और सबके लिये) अन्नकी इच्छा अर्थात् प्राप्तिका प्रयत्न करनेवाले ये पूर्वोक्त वीरके अनुयायी हैं। ये धनवान् हैं, धनका दान करते है, स्वयं बलिष्ठ है और प्रजाकी सुरक्षाके लिये अपनी शक्ति लगाते हैं।

१२ स एषु द्युम्नं पीपयत् (५)- वह वीर अपने अनुयायियोंमें तेजस्वी धन भरपूर देता है। बांटता है।

१३ सः मर्त्येषु देवान् इत् कृणोति (१)- वह वीर अपने अनुयायी मानवोंमें दिव्य विबुधोंको पूज्य बनाकर स्थापन करता है। मानवोंमें देवोंको बनाता है।

पाठक मनन करनेसे अधिक भाव इस तरह प्राप्त कर सकते हैं।

सूक्तमें ऋषिका नाम

इस सूक्तमें 'गोतम ऋषि' का नाम ५ वें मंत्रमें आया है। '**विप्रेभिः गोतमेभिः अग्निः अस्तोष्ट**' (मं. ५)- ब्राह्मण गोतमवंशके ऋषियोंद्वारा अग्नि प्रशंसित हुआ है। यहां '**गोतमेभिः**' ऐसा बहुवचनमें प्रयोग है। बहुवचनसे तीन अथवा तीनसे अधिक संख्याका बोध होता है। तीन गोतमोंने अथवा तीनसे अधिक गोतमोंने अग्निकी स्तुति की है। अर्थात् गोतम ऋषिके कुलमें उत्पन्न हुए अनेक ऋषियोंने यह अग्निकी स्तुती की है।

चतुर्थ सूक्तका विवरण यहां समाप्त होता है।

(५) शत्रुको हिलानेवाला वीर

(ऋ. १।७८) गोतमो राहूगणः। अग्निः। गायत्री।

अभि त्वा गोतमा गिरा जातवेदो विचर्षणे । द्युम्नैरभि प्र णोनुमः ॥१॥
तमु त्वा गोतमो गिरा रायस्कामो दुवस्यति । द्युम्नैरभि प्र णोनुमः ॥२॥
तमु त्वा वाजसातममङ्गिरस्वद्धवामहे । द्युम्नैरभि प्र णोनुमः ॥३॥
तमु त्वा वृत्रहन्तमं यो दस्यूँरवधूनुषे । द्युम्नैरभि प्र णोनुमः ॥४॥
अवोचाम रहूगणा अग्नये मधुमद् वचः । द्युम्नैरभि प्र णोनुमः ॥५॥

अन्वयः	अर्थ
अन्वयः- हे जातवेदः विचर्षणे ! त्वा गोतमाः गिरा द्युम्नैः अभि अभि प्र णोनुमः ॥	अर्थ- १ हे वेदप्रकाशक विशेष ज्ञानी (अग्ने)! तुझे हम गोतम अपनी वाणीसे और दिव्य तेजस्वी स्तोत्रोंके साथ सब प्रकार वारंवार प्रणाम करते हैं ॥
२ रायस्कामः गोतमः तं उ त्वा गिरा दुवस्यति० ॥	२ धनकी इच्छा करनेवाला गोतम उस तुझकी अपनी वाणीसे सेवा करता है० ॥
३ वाजसातमं तं उ त्वा अंगिरस्वत् हवामहे० ॥	३ धनका बटवारा करनेवाले उस तुझको अंगिरा ऋषिकी तरह हम बुलाते हैं० ॥
४ दस्यून् यः (त्वं) अवधूनुषे, तं वृत्रहन्तमं त्वा द्युम्नैः अभि प्र णोनुमः ॥	४ शत्रुओंको जो तू हिला देता है, उस तुझे वृत्रका नाश करनेवाले वीरको दिव्य तेजस्वी स्तोत्रोंके साथ हम सब प्रणाम करते हैं ॥
५ रहूगणाः अग्नये मधुमद् वचः अवोचाम। (तं) द्युम्नैः अभि प्र णोनुमः ॥	५ रहूगणके हम सब पुत्र अग्निके लिये मधुर स्तोत्रका गान करेंगे। और उसको दिव्य तेजस्वी स्तोत्रोंके साथ वारंवार प्रणाम करेंगे ॥

सूक्तमें ऋषिका नाम

इस सूक्तमें ऋषिका नाम और उसका गोत्र भी कहा है।

रहूगणाः अग्नये वचः अवोचाम। (मं. ५)

गोतमाः गिरा अभि प्र णोनुमः। (मं. १)

गोतमः तं गिरा दुवस्यति। (२)

रहूगणके पुत्र गोतम हैं यह बात यहां सिद्ध होती है। इसलिये 'गोतमो राहूगणः' ऐसा इस ऋषिका नाम हरएक सूक्तपर दिया है।

यहां 'रहूगणाः गोतमाः' ये पद बहुवचनमें हैं और 'गोतमः' पद एकवचनमें हैं। रहूगणके अनेक पुत्र होंगे, उनका वंश नाम यह होगा अथवा आदरके लिये भी बहुवचन हो सकता है। पर स्तुति करनेवाला, देवताकी उपासना करनेवाला स्वयं अपनाही नाम आदरके लिये बहुवचनमें लिखेगा, ऐसा प्रतीत नहीं होता। इसलिये गोत्रमें उत्पन्न हुए सब ऋषियोंके लिये यह बहुवचनका प्रयोग यहां किया है ऐसा मानना युक्तियुक्त प्रतीत होता है।

शत्रुका नाश

इस सूक्तमें थोडासा वीरकी वीरताका वर्णन है। इसमें निम्नलिखित पद विचारणीय है।

१ दस्यून् अवधूनुषे (४)– शत्रुओंको जडसे उखाडकर दूर फेंक देता है।

२ वृत्रहन्तमः— वृत्रका, घेरनेवाले, घेर कर लडनेवाले शत्रुका नाश करता है।

३ जातवेदाः— वेद, ज्ञान और धन देनेवाला। विचर्षणिः— विशेष ज्ञानी, सूक्ष्म दृष्टिसे देखनेवाला (१),

४ वाजसातमः— अन्नका बटवारा करनेवाला (३), शत्रुनाशक वीरके ये विशेषण हैं। इन गुणोंसे युक्त यहांका वीर है।

अङ्गिरा ऋषि

इस सूक्तमें आङ्गिरा ऋषिका नाम आया है। 'अंगिरस्वत् हवामहे' (३) अङ्गिरा ऋषिने जैसी स्तुति की थी, वैसीही हम कर रहे हैं। इस वर्णनसे अङ्गिरा ऋषि गोतमके पूर्व समयका प्रतीत होता है।

अङ्गिराः
|
रहूगणः
|
गोतमः

यह वंश है। गोतमका पिता रहूगण, और पितामह अंगिरा ऋषि है। शेष मंत्र स्पष्ट हैं। यहां पांचवे सूक्तका स्पष्टीकरण समाप्त होता है।

(६) बलका स्वामी

(ऋ. १।७९) गोतमो राहूगणः। १-३ अग्निः मध्यमोऽग्निर्वा; ४-१२ अग्निः।
१—३ त्रिष्टुप्; ४-६ उष्णिक्; ७-१२ गायत्री।

हिरण्यकेशो रजसो विसारेऽहिर्धुनिर्वात इव ध्रजीमान्।
शुचिभ्राजा उषसो नवेदा यशस्वतीरपस्युवो न सत्याः १
आ ते सुपर्णा अमिनन्तँ एवैः कृष्णो नोनाव वृषभो यदीदम्।
शिवाभिर्न स्मयमानाभिरागात् पतन्ति मिहः स्तनयन्त्यभ्रा २

अन्वयः— १ हिरण्यकेशः, रजसः विसारे अहिः धुनिः वात इव ध्रजीमान्, शुचिभ्राजाः। यशस्वतीः अपस्युवः सत्याः न उषसः नवेदाः॥

२ ते सुपर्णाः एवैः आ अमिनन्त। कृष्णः वृषभः नोनाव। यदि इदं शिवाभिः न स्मयमानाभिः आ अगात्। मिह पतन्ति अभ्रा स्तनयन्ति॥

अर्थ— १ (यह अग्नि आकाशमें) सुवर्ण जैसे तेजस्वी केशों– किरणोंसे युक्त (सूर्यके रूपमें) विस्तृत अन्तरिक्षमें वायुके समान गतिमान् (तथा विद्युत् रूपमें) सर्पके समान हिलानेवाला, (और पृथ्वीपर) शुद्ध प्रकाशवाला है। यशस्विनी अपने कर्मोंमें कुशल सच्ची पतिव्रता स्त्रियोंके समान (शुद्ध) उषाएं (इसको) जानती हैं॥

२ (हे विद्युत् अग्ने!) तेरे पक्षी जैसे (किरण) अपनी शक्तियोंके साथ (मेघमें) चारों ओरसे घुसने लगे। काला बैल (मेघ तब) वारंवार गर्जना करने लगा। तब शुभफलदायीनी हंसनेवाली (स्त्रियोंके समान बिजलियोंके साथ पर्जन्य) चारों ओरसे आगया, शुरू हुआ। धूंवाधार वृष्टि गिरने लगी, और मेघ भी गर्जने लगे।

यदीमृतस्य पयसा पियानो नयन्नृतस्य पथिभी रजिष्ठैः ।
अर्यमा मित्रो वरुणः परिज्मा त्वचं पृञ्चन्त्युपरस्य योनौ ३
अग्ने वाजस्य गोमत ईशानः सहसो यहो । अस्मे धेहि जातवेदो महि श्रवः ४
स इधानो वसुष्कविरग्निरीळेन्यो गिरा । रेवदस्मभ्यं पुर्वणीक दीदिहि ५
क्षपो राजन्नुत त्मनाऽग्ने वस्तोरुतोषसः । स तिग्मजम्भ रक्षसो दह प्रति ६
अवा नो अग्न ऊतिभिर्गायत्रस्य प्रभर्मणि । विश्वासु धीषु वन्द्य ७
आ नो अग्ने रयिं भर सत्रासाहं वरेण्यम् । विश्वासु पृत्सु दुष्टरम् ८
आ नो अग्ने सुचेतुना रयिं विश्वायुपोषसम् । मार्डीकं धेहि जीवसे ९
प्र पूतास्तिग्मशोचिषे वाचो गोतमाग्नये । भरस्व सुम्नयुर्गिरः १०
यो नो अग्नेऽभिदासत्यन्ति दूरे पदीष्ट सः । अस्माकमिद् वृधे भव ११
सहस्राक्षो विचर्षणिरग्नी रक्षांसि सेधति । होता गृणीत उक्थ्यः १२

---

३ यत् ईं ऋतस्य पयसा पियानः, ऋतस्य रजिष्ठैः पथिभिः नयन्, अर्यमा मित्रो वरुणः परिज्मा उपरस्य योनौ त्वचं पृञ्चन्ति ॥

४ हे सहसो यहो अग्ने ! गोमतः वाजस्य ईशानः । हे जातवेदः । अस्मे महि श्रवः धेहि ॥

५ सः अग्निः वसुः कविः, गिरा ईळेन्यः । हे पुर्वणीक ! अस्मभ्यं रेवत् दीदिहि ॥

६ हे राजन् अग्ने ! क्षपः । उत त्मना (क्षपः) । वस्तोः उत उषसः, हे तिग्मजम्भ ! सः (त्वं) रक्षसः प्रति दह ।

७ विश्वासु धीषु वन्द्य अग्ने ! गायत्रस्य प्रभर्मणि नः ऊतिभिः अव ॥

८ हे अग्ने ! सत्रासाहं वरेण्यं विश्वासु पृत्सु दुष्टरं रयिं नः आ भर ॥

९ हे अग्ने ! नः जीवसे मार्डीकं विश्वायुपोषसं रयिं सुचेतुना आ धेहि ॥

१० हे गोतम ! सुम्नयुः तिग्मशोचिषे अग्नये पूताः वाचः गिरः प्र भरस्व ॥

११ हे अग्ने ! नः अन्ति दूरे यः अभिदासति, सः पदीष्ट । अस्माकं इत् वृधे भव ॥

१२ सहस्राक्षः विचर्षणिः अग्निः रक्षांसि सेधति । होता उक्थ्यः गृणीते ॥

३ पहिले वह (मेघ) जलके (रूपमें प्राप्त) दूधसे पुष्ट होकर, जलके अन्तरिक्ष मार्गोंसे घुमाया जाकर (पश्चात्) अर्यमा, मित्र, वरुण और परिज्मा (ये देव) मेघके स्थानमें (उसकी) त्वचाको (जलसे) भर देते हैं ॥

४ हे बलके लिये प्रसिद्ध अग्ने ! गाइयोंसे प्राप्त अन्नका तू स्वामी है। हे वेदप्रकाशक ! हम सबको बडा अन्न दो ॥

५ वह अग्नि (सबका) निवासकर्ता और ज्ञानी है, वह वाणीसे प्रशंसनीय है। हे बडी सेनावाले ! हमें तेजस्वी धन दे ॥

६ हे राजन् अग्ने ! (शत्रुको) शान्त कर। और स्वयं (वैरीको शान्त कर)। रात्रीमें और उषःकालमें, हे तीक्ष्ण दांत-वाले ! तू राक्षसोंको जला दे ॥

७ हे सब बुद्धिके कर्मोंमें वन्दनीय अग्ने ! गायत्री (छन्दमें) स्तोत्र गानेपर हमें (अपनी) सुरक्षाओंसे सुरक्षित रख ॥

८ हे अग्ने! सर्व शत्रुको परास्त करनेवाला, वरणीय और सब युद्धोंमें (शत्रुके लिये) दुष्प्राप्य धन हमें दे ॥

९ हे अग्ने! हमारे दीर्घ जीवनके लिये, सुखदायी, पूर्ण आयुतक पुष्टि करनेवाला धन विचारपूर्वक हमें दे ॥

१० हे गोतम ऋषे! कल्याण प्राप्त करनेकी इच्छावाला तू तीक्ष्ण प्रकाशवाले अग्निके (सन्तोषके) लिये पवित्र वाक्योंसे युक्त सूक्त भरपूर गाओ ॥

११ हे अग्ने ! हमारे पास या दूर (रहकर) जो (शत्रु हमें) दास करना चाहता है, उसे नीचे गिरा दे। हमारी उन्नति कर।

१२ सहस्र नेत्रोंवाला सर्वसाक्षी अग्नि दुष्टोंको नष्ट करता है। हवन करनेवाला प्रशंसनीय (अग्नि) प्रशंसित हो रहा है ॥

बडा सेनापति

गोतम ऋषिके अग्नि-सूक्तोंमें यह अग्निसूक्त अन्तिम है। इसमें अग्निको 'बलका स्वामी' मानकर उसका वर्णन किया है। पांचवें मंत्रमें **'पुर्वणीक'** (पुरु + अनीक) पद है, इसका अर्थ 'बडी सेनावाला' है। **'अनीक'** पदका अर्थ- 'सेना, सैन्य, युद्ध, द्वन्द्व, हमला, पंक्ति, नोक, अग्रभाग, मुख, रूप' यह है। बडी सेनावाला, बडा युद्ध करनेवाला, प्रबल हमला करनेवाला वीर यह इसका आशय है। 'बल' पदके अर्थ 'सामर्थ्य और सैन्य' ऐसे दो प्रकारके होते हैं। यहां इस सूक्तमें अग्निका इन दोनों तरहसे वर्णन किया है॥

१ **'सहसः यहुः'** (मं.४)- बलका पुत्र, बलके कार्य करनेके लिये जन्मा हुआ, बलसे प्रभाव दिखानेवाला। ये बलके अर्थात् शक्तिसे होनेवाले अथवा सेनासे होनेवाले कार्य ये हैं—

१ हे राजन्! त्मना क्षपः। रक्षसः प्रति दह (६)- हे राजा! हे सेनापते, हे अग्रणे! तू स्वयं जनताके सब शत्रुओंको प्रतिबंध कर, शान्त कर। वैरी प्रभावी न बनें ऐसा कर। असुरों राक्षसों और दुष्टोंको जलाकर नष्ट कर दे। यहां अग्निका विशेषण 'राजन्' है। अग्निका 'अग्रणी' रूप मानकर 'हे राजन् अग्रणे' ऐसा अर्थ करनेसे सब अर्थ प्रकरणानुकूल बनता है।

३ यः नः अन्ति दूरे वा अभिदासति, सः पदीष्ट (११)- जो दूरसे या समीपसे हमें दास बनाना चाहता है, जो हमारा नाश करना चाहता है वह नीचे गिर जावे।

४ सहस्राक्षः विचर्षणिः रक्षांसि सेधति (१२) सहस्र आंखवाला सब देखनेवाला अग्रणी दुष्टोंका नाश करता है। यहां राज-प्रकरणमें सहस्राक्ष पद सहस्रों दूतोंसे राष्ट्रके सब व्यवहारोंको देखनेवाला इस अर्थमें है। राजा, अग्रणी अपने दूतोंके सहस्रों आंखोंसे देखता है और राष्ट्रमें या राष्ट्रके बाहर जो दुष्ट शत्रु होते हैं, उनको ठीक तरह पहचान कर उनका नाश अपने बलसे अथवा सैनिकोंसे करता है।

५ गोमतः वाजस्य ईशानः (४)- गौओंसे युक्त अन्नका यह स्वामी है। अर्थात् यह गौओं और विविध अन्नोंकी सुरक्षा अपने राज्यमें करता है। इससे जनताका पालन-पोषण करता है।

६ जातवेदाः (४); **कविः** (५); **धीषु वन्द्य** (७)- ये तीनों पद इसकी ज्ञानी होनेकी साक्षी दे रहे हैं। **जात-वेदाः**- जिससे वेद, ज्ञानसंग्रहके मंत्र, प्रकाशित हुए, जो ज्ञानका प्रचार करता है। **कविः**- ज्ञानी, अतीन्द्रिय ज्ञानसे देखनेवाला, क्रान्तदर्शी। **धीषु वन्द्य**- बुद्धिके कामोंमें ज्ञानके विषयोंमें पूजाके योग्य। यह सेनापति अग्रणी इस तरह ज्ञानी है। इसी लिये यह पूजनीय माना गया है। सेनापति और अग्रणी ऐसा ज्ञानी होना चाहिये।

७ तिग्मजम्भः (६)- तीखे दांतोंवाला, शत्रुको खा जानेवाला, शत्रुका नाश करनेवाला वीर।

धन कैसा चाहिये

इस सूक्तमें जो धन मानवोंको स्वीकार करनेयोग्य है उसका उत्तम वर्णन है, देखिये—

१ अस्मे महि श्रवः धेहि (४)- हमें बडा महत्व देनेवाला, कीर्ति बढानेवाला धन दे।

२ अस्मभ्यं रेवत् दीदिहि (५)- हमें धनसे युक्त करके प्रकाशित कर अर्थात् हमें ऐसा धन दे कि जिससे हम तेजस्वी बनें।

३ सत्रासाहं विश्वासु पृत्सु दुष्टरं वरेण्यं रयिं नः आ भर (८)-हमें ऐसा धन दे कि, जिससे हम सुसंगठित होकर कितने भी युद्ध करने पडे तो भी उनमें कोई शत्रु उस धन-को छीन न सके, ऐसे बलवान् हम बनें। यह मंत्रभाग सबको विशेषही मनन करनेयोग्य है। इसमें धन संगठना करने-वाला, शत्रुके लिये अजेय तथा शत्रुका पराभव करनेवाला और इस कारण अपने पास रखनेयोग्य हो, ऐसा धनका वर्णन किया है।

४ जीवसे मार्डीकं विश्वायुपोषसं रयिं नः आ धेहि (९)- ऐसा धन हमें मिले कि जो हमें दीर्घ आयु देवे सुख देवे, आयुभर हमारा पोषण करता रहे अर्थात् वह हमारी क्षीणता न करे, हमें अल्पायु न बना देवे, हमारा दुःख न बढावे। धन चाहनेवालोंको उचित है कि वे इन मंत्रोंका मनन अच्छी तरह करें।

५ नः ऊतिभिः अव (७)- हमारी सब संरक्षणोंसे सुरक्षा कर। अनुयायियोंकी सुरक्षा करना अग्रणीका कार्य है।

इस तरह पाहिले तीन मंत्रोंको छोडकर शेष नौ मंत्रोंमें यह बोध कराया है। राजा, सेनापति, अग्रणी आदिके कर्तव्य इस तरह यहां वर्णन किये गये हैं।

धूंवाधार वृष्टि

पहिले तीन मंत्रोंमें अग्निके तीन रूप कहे हैं और बीचका विद्युत् अग्नि वृष्टि करता है, ऐसा भी कहा है। देखिये—

१ **हिरण्यकेशः** (१)– सुवर्ण जैसे चमकनेवाले केशवाला यह सूर्य है। यह अग्निका रूप आकाशमें रहता है।

अहिः– सर्प जैसा अग्नि विद्युत्‌के रूपसे अन्तरिक्षमें रहता है। जब विद्युत् चमकती है, तब वह टेढीमेढी रेषा दिखाई देती है, यही सांप जैसी दीखती है इसलिये इसको यहां 'अहिः (सर्प)' कहा है। यह अग्नि (**धुनिः**) सबको हिला देता है। यह विद्युत् अग्नि (**रजसः विसारे**) अन्तरिक्षके विस्तारमें (**भ्रजीमान्**) गतिमान् रहता है।

तीसरा अग्नि भूमिपर (शुचि–भ्राजाः) शुद्ध प्रकाश देनेवाला है। ये तीन रूप एकही अग्निके हैं। एकके तीन और तीनका एक यह सिद्धान्त यहां स्पष्ट हुआ। एकके तीन भी रूप हैं और तीन रूप होते हुए वह एक भी अथवा एकही है।

२ दूसरे मंत्रमें कहा है कि बिजलीके तेजस्वी किरण अपनी भेदक शक्तिसे मेघमें घुसते हैं, काले मेघ इस समय गर्जना करते हैं, बीच बीचमें हंसनेवाली स्त्रियोंके समान बिजलियाँ चमकती हैं, तब धूंवाधार वृष्टि होती हैं और बडी गर्जनाएँ होती है। यह वृष्टिका वर्णन सुन्दर है।

३ तृतीय मंत्रमें मेघ कैसे बनते हैं, यह कहा है। प्रथम भूमिपरके जलका पान करके, जलके भांपसे मेघ बनते हैं, वे बडे पुष्ट होते हैं, फिर वे अन्तरिक्षमें मेघमण्डलसे इधर उधर वायुसे घुमाये जाते हैं, पश्चात् अन्तरिक्षमें उसमें पानी बनकर वृष्टि होती है। (**अर्यमा**) अग्नि, उष्णता, विद्युत् (**मित्र**) सूर्य, (**वरुणः**) जलदेव, चन्द्रमा (**परिज्मा**) वायु, इनके कारण मेघमें पानी बनता है और वृष्टि होती है। इन देवोंके कौनसे रूप वृष्टि करनेके लिये सहायक होते हैं, इसकी खोज शास्त्रज्ञोंको अवश्य करनी चाहिये।

इस ढंगसे प्रथम मंत्रमें सूर्य, विद्युत् और अग्निका वर्णन है और अगले दो मंत्रोंमें पर्जन्यका वर्णन है। यही पर्जन्य अन्न उत्पन्न करता है। '**पर्जन्यात् अन्नसंभवः**।' (गीता)। इस अन्नसे प्राणियोंका आयुभर पोषण होता है, बल बढता है और वे पराक्रम करनेमें समर्थ बनते हैं और शत्रुको उखाड देते हैं और जनताको सुखी करते हैं। यह पहिले ३ मंत्रोंका आगेके ९ मंत्रोंके साथ संबंध है।

सूक्तमें ऋषिका नाम

इस सूक्तमें गोतम ऋषिका नाम १० वें मंत्रमें आया है। स्वयं गोतम अपने आपको संबोधन कर रहा है, ऐसा काव्यमय वर्णन यहां है— 'हे गोतम ! तू अग्निके काव्यका गायन कर' ऐसा गोतम ऋषिही अपने आपको यहां कह रहा है। काव्यमें ऐसा वर्णन किया जाता है।

इस सूक्तके, १० वें मंत्रमें गोतम ऋषिको 'सुम्रयु' होनेको कहा है। किसी देवताकी उपासना करनी हो तो प्रथम 'सुम्रयु' होना आवश्यक है। 'सुम्रयु' पद 'सु–म्र–यु' अर्थात् 'सुष्टु–मन–युक्त' उत्तम शुभ संकल्पवाले मनसे युक्त होना चाहिये। शुभ मनवाला होनेसेही उपासना सफल होती है।

अग्नि–प्रकरणमें

ऋषिका आदर्श पुरुष

गोतम ऋषिके इन छः सूक्तोंका यह पहिला '**अग्नि-प्रकरण**' यहां समाप्त हो रहा है। वास्तवमें अग्निदेवता वेदमें 'ब्राह्मणत्व' की द्योतक है। अग्निदेवताके मंत्रोंसे वेदमें ब्राह्मण-वर्णका धर्म प्रकाशित होता है और इन्द्र देवतासे क्षात्रधर्म प्रकाशित होता है, यह सत्य है। परंतु वेदका ब्राह्मण और आजका ब्राह्मण इसमें भूमि और आकाशका अन्तर है। वेदमें वर्णित ब्राह्मण जैसा तत्त्वज्ञानमें प्रवीण है वैसाही युद्धविद्यामें भी प्रवीण दीखता है, यह बात यहांके इन छः सूक्तोंके अग्निमंत्रोंसे स्पष्ट हो जाती है, इसलिये प्रथम इस आदर्श पुरुषके ज्ञानी होनेका वर्णन देखिये।

१ **वेधस्तमः** (७५।२)– ज्ञानियोंमें अत्यंत श्रेष्ठ, कुशलतासे वस्तु निर्माण करनेमें प्रवीण। यहां ज्ञान और कर्म इन दोनोंका एकही मनुष्यमें होनेकी बात कही है।

२ **अङ्गिरस्तमः** (७५।२)–(अङ्ग–रसः–तमः) शरीरके अंगप्रत्यंगोंमें जो जीवनरस है, उस रससे चिकित्सा करनेकी विद्या जाननेवालेको 'अङ्गिरस्' कहते हैं। इस विद्यामें प्रवीण आंगिरसी विद्या चिकित्सा विद्याही है। सब प्रकारके अंगरसोंका उपयोग इस विद्यामें होता है। यह एक बडा भारी शास्त्र है। मनुष्योंका पोषण और रोगनिवारण इससे होता है। इस विद्याको जाननेवालोंमें प्रवीण यह इसका अर्थ है।

३ **कविः** (७६। ५; ७९। ५)— ज्ञानी, कवि, विद्वान्, दूरदर्शी, अतीन्द्रिय विषयको प्रत्यक्ष करनेवाला।

४ **मनसा बोधति** (७७।२)- मनसे सब कुछ जानता है। जिसके मनमें जाननेकी विशेष शक्ति होती है।

५ **जातवेदाः** (७७।५, ७८।१; ७९।४)- वेदोंका प्रवर्तन करनेवाला, वेदोंका ज्ञाता, ज्ञानका प्रसार करनेवाला, ज्ञानी।

६ **धीषु वन्द्यः** (७९।७)- बुद्धिवानों अथवा ज्ञानियोंमें पूजनीय वा आदरणीय, श्रेष्ठ बुद्धिमान्

इस प्रकरणके 'कवि, जातवेदाः, वेधस्तमः' ये पद यह आदर्श पुरुष, जो गोतम ऋषिने, वैदिक धर्मियोंके सामने रखा है, वह श्रेष्ठ विद्वान् है, यही भाव बता रहे हैं। मामूली पढे लिखेके लिये ये विशेषण प्रयुक्त नहीं होते। इसलिये हम कह सकते हैं कि गोतम ऋषिकी दिव्य दृष्टिसे आदर्श पुरुष वह है कि जो बडा तत्त्वज्ञानी, वेदवेत्ता, मनसे सब जाननेवाला, चिकित्सा-शास्त्रमें निपुण और विद्वानोंमें आदरणीय है।

आदर्श पुरुषका चारित्र्य

गोतम ऋषिने जिस दिव्य दृष्टिसे आदर्श पुरुषका साक्षात्कार किया, उसके चारित्र्यके विषयमें इनके सूक्तोंमें निम्नलिखित निर्देश पाये जाते हैं—

७ **अध्वरं उपप्रयन्** (७४।१), **अध्वरं दस्मत् कृणोषि** (७४।४), **अध्वरेषु शंतमः** (७७।२)— अध्वर वह कर्म है कि जिसमें हिंसा, कुटिलता, कपट, छल, दुष्टता न हो। यह आदर्श पुरुष ऐसा हिंसारहित कर्म स्वयं करता है, दूसरा कोई ऐसे कर्म करे, तो उसमें जाकर सहाय्यकारी होता है, उसको परिपूर्ण करता है, सुंदरतासे निभाता है और ऐसे कर्मोंमें शान्तिसे प्रसन्नतापूर्वक बैठता है। अर्थात् कभी हिंसा, कपट, कुटिलता, छल करता नहीं। सदा सरलतासे रहता है और सब कार्य इसी तरह अहिंसाभावसे करता है।

८ **सुहव्यः, सुबर्हिः, सुदेवः** (७४।५)- उत्तम दाता, दिव्य विबुधोंको आह्वान करनेवाला, सज्जनोंको अपने पास बुलानेवाला, उत्तम यज्ञ करनेवाला और ईश्वरका उत्तम भक्त।

९ **पोत्रं वेषि** (७६।४)- पवित्रता करनेका कर्म करता है।

१० **यज्ञानां अभिशस्तिपावा** (७६।३)— यज्ञोंकी प्रशंसा करनेवाला, प्रशस्त कर्मोंकीही स्तुति करनेवाला, कभी बुरे कार्योंका वर्णन नहीं करेगा।

११ **क्रतुः साधुः मित्रः** (७७।३)— वह पुरुषार्थी, साधु सज्जन, सत्पुरुष, सन्त और सबका मित्र होता है।

१२ **ऋतावा**(७७।१;२;५)- सत्यवान्, सरल, सदाचारी, सत्यनिष्ठ, सत्यभक्त।

इन वर्णनोंसे पता लग सकता है कि गोतम ऋषिकी दिव्य दृष्टिसे जिस आदर्श पुरुषका उनको साक्षात्कार हुआ उसका चालचलन कैसा होगा। यह आदर्श पुरुष हिंसा, छल, कपटके कुकर्म कभी नहीं करेगा, वह उदार दाता होगा, वह यथायोग यज्ञ करेगा, वह ईश्वरकी भक्ति करेगा, विचार-उच्चार-आचार में पवित्र रहेगा, शुभ कर्मोंकीही प्रशंसा करेगा, वह स्वयं उत्तम प्रशस्त कर्म करेगा, वह साधु कहलाने योग्य आचरण करेगा और सबके साथ मित्रवत् आचरण करेगा। सत्यमार्गसे ही वह चलेगा।

आदर्श पुरुषकी वीरता

ये पूर्वोक्त गुण प्रायः ब्राह्मणवर्णके हैं, फिर वीरता भी उस आदर्श पुरुषमें चाहिये। अन्यथा वह आदर्श नहीं होगा, इस-लिये इसकी वीरता दिखानेवाले गुण अब देखिये—

१ **स्त्रीहितीषु संजग्मासु कृष्टिषु गयं अरक्षत्** (१।७४।२)- सब लोग युद्ध-कार्यमें लग जानेपर यह उनके घरोंकी सुरक्षा करता है। जो राष्ट्रके हितके कार्यमें लगे रहते हैं, उनकी सुरक्षा करता है।

२ **रणे रणे धनंजयः** (७४।३)- प्रत्येक युद्धमें विजय प्राप्त कर धनको लानेवाला, शत्रुके धनको प्राप्त करनेवाला, प्रत्येक युद्धमें जय कमानेवाला।

३ **विश्वान् रक्षसः प्र सु धक्षि** (१।७६।३)- सब दुष्टोंको पूर्णतासे जला दो। सब शत्रुओंका नाश करो।

४ **नृणां नृतमः रिशादाः** (१।७७।४)- नेताओंमें श्रेष्ठ नेता वह है जो शत्रुओंका विनाश करता है।

५ **दस्यून् अवधूनुषे वृत्रहन्तमः** (१।७८।४)- शत्रुओंको हिला देता है, तू शत्रुका नाश करनेमें सबसे अधिक प्रवीण है।

६ **यः अभिदासति, सः पदीष्ट** (१।७९।११)- जो हमारा नाश करना चाहता है, वह नीचे गिर जावे, उसका नाश होवे।

इस तरह आदर्श पुरुषकी वीरताका वर्णन इन सूक्तोंमें है। जो ऐसा ज्ञानी और वीर होगा, वही गोतम ऋषिका आदर्श पुरुष है। वेदपाठियोंके सामने गोतम ऋषिने यह आदर्श रखा है। इस आदर्शके अन्य गुण इन सूक्तोंमें पाठक

देख सकते हैं। वेदका ऋषि अपनी दिव्य प्रतिभासे एक आदर्श दिव्य स्फुरणसे देखता है और उसको जनताके सामने रखनेके लिये स्तोत्रमें ग्रथित कर देता है। इस तरह यह अमर काव्य हुआ है।

इन्द्र-प्रकरण

(७) स्वराज्यकी पूजा

(ऋ. १।८०) गोतमो राहूगणः। इन्द्रः; १६ इन्द्रः (अथर्वा, मनुः दध्यङ् च)। पंक्तिः।

इत्था हि सोम इन्मदे ब्रह्मा चकार वर्धनम्।
शविष्ठ वज्रिन्नोजसा पृथिव्या निः शशा अहिमर्चन्ननु स्वराज्यम् १
स त्वामदद् वृषा मदः सोमः श्येनाभृतः सुतः।
येना वृत्रं निरद्भ्यो जघन्थ वज्रिन्नोजसार्चन्ननु स्वराज्यम् २
प्रेह्यभीहि धृष्णुहि न ते वज्रो नि यंसते।
इन्द्र नृम्णं हि ते शवो हनो वृत्रं जया अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् ३
निरिन्द्र भूम्या अधि वृत्रं जघन्थ निर्दिवः।
सृजा मरुत्वतीरव जीवधन्या इमा अपोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् ४

अन्वयः- १ ब्रह्मा इत्था हि सोमे मदे इत् वर्धनं चकार। (हे) शविष्ठ वज्रिन्! स्व-राज्यं अनु अर्चन् ओजसा अहिं पृथिव्याः निः शशाः॥

२ (हे) वज्रिन्! सः श्येन-आभृतः सुतः वृषा मदः सोमः त्वा अमदत्। येन (त्वं) स्व-राज्यं अनु अर्चन् ओजसा वृत्रं अत्-भ्यः निः जघन्थ॥

३ (हे) इन्द्र! प्र इहि, अभि इहि, धृष्णुहि, ते वज्रः नि यंसते न। (त्वं) स्व-राज्यं अनु अर्चन्, वृत्रं हनः, अपः जयाः, (यतः) ते शवः नृम्णं हि॥

४ (हे) इन्द्र! स्व-राज्यं अनु अर्चन् भूम्याः अधि दिवः (अधि) वृत्रं निः निः जघन्थ। (त्वं) इमाः मरुत्वतीः जीवधन्याः अपः अव सृज॥

अर्थ-१ ज्ञानीने, इस प्रकारके सोमके आनन्दमें इन्द्रके उत्साहका वर्धन किया। हे बल-सम्पन्न वज्रधारी इन्द्र! तूने, स्वराज्यका आदरसत्कार करते हुए, अपने पराक्रमसे शत्रुको अपनी राष्ट्र-भूमिपर शासन किया, उसको अपने आधीन कर रखा॥

२ हे वज्रधारी इन्द्र! उस श्येनद्वारा लाये गये कूट-छानकर निचोडे, बल बढानेवाले आनन्ददायक सोमने तुझे आनंदित कर दिया, जिससे तूने अपने स्वराज्यका सत्कार करते हुए अपने बलसे शत्रुको मारकर उसे जलसे बाहर निकाल दिया, जल-स्थानसे दूर भगा दिया॥

३ हे इन्द्र! शत्रुके सम्मुख जा, उसे सब ओरसे घेर ले और उसका नाश कर दे। तेरा वज्र तो कभी पराभूत नहीं किया जा सकता। तू अपने स्वराज्यका सत्कार करते हुए शत्रुको मार और जलोंको जीत, क्योंकि तेरा बल मानवोंका हित करनेवाला है॥

४ हे इन्द्र! अपने स्वराज्यका आदरसत्कार करते हुए भूमिपर और दिव् लोकमें शत्रुको निःशेष होने तक नष्ट कर। तू इन वीरोंको अपने साथ रखनेवाले जीवन-धारक जलोंको बहनेके लिये छोड दे॥

इन्द्रो वृत्रस्य दोधतः सानुं वज्रेण हीळितः ।
अभिक्रम्याव जिघ्नतेऽपः सर्माय चोदयन्नर्चन्ननु स्वराज्यम् ५

अधि सानौ नि जिघ्नते वज्रेण शतपर्वणा ।
मन्दान इन्द्रो अन्धसः सखिभ्यो गातुमिच्छत्यर्चन्ननु स्वराज्यम् ६

इन्द्र तुभ्यमिदद्रिवोऽनुत्तं वज्रिन् वीर्यम् ।
यद्ध त्यं मायिनं मृगं तमु त्वं माययावधीरर्चन्ननु स्वराज्यम् ७

वि ते वज्रासो अस्थिरन्नवतिं नाव्या३ अनु ।
महत् त इन्द्र वीर्यं बाह्वोस्ते बलं हितमर्चन्ननु स्वराज्यम् ८

सहस्रं साकमर्चत परि ष्टोभत विंशतिः ।
शतैनमन्वनोनवुरिन्द्राय ब्रह्मोद्यतमर्चन्ननु स्वराज्यम् ९

इन्द्रो वृत्रस्य तविषीं निरहन्त्सहसा सहः ।
महत् तदस्य पौंस्यं वृत्रं जघन्वाँ असृजदर्चन्ननु स्वराज्यम् १०

---

५ इन्द्रः हीडितः स्व-राज्यं अनु अर्चन् दोधतः वृत्रस्य सानुं अभि-क्रम्य वज्रेण अव जिघ्नते, सर्माय अपः चोदयन् ॥

६ मन्दानः इन्द्रः स्व-राज्यं अनु अर्चन् शत-पर्वणा वज्रेण सानौ अधि नि जिघ्नते, सखि-भ्यः अन्धसः गातुं इच्छति ॥

७ (हे) अद्रि-वः वज्रिन् इन्द्र ! तुभ्यं इत् वीर्यं अनुत्तं (अस्ति), यत् ह त्वं स्व-राज्यं अनु अर्चन् तं उ त्यं मायिनं मृगं मायया अवधीः ॥

८ (हे) इन्द्र ! ते वज्रासः नवतिं नाव्याः अनु वि अस्थिरन् । ते वीर्यं महत्, ते बाह्वोः बलं हितं, (त्वं) स्व-राज्यं अनु अर्चन् (वृत्रं जहि) ॥

९ (हे मनुष्याः) सहस्रं साकं अर्चत, विंशतिः परि स्तोभत । शता एनं अनु अनोनवुः । इन्द्राय ब्रह्म उत्-यतं (अस्ति) । (हे इन्द्र !) स्व-राज्यं अनु अर्चन् ॥

१० इन्द्रः सहसा वृत्रस्य तविषीं सहः (च) निः अहन् । अस्य तत् पौंस्यं महत् । स्व-राज्यं वृत्रं जघन्वान् (अपः) अनु अर्चन् ॥

५ इन्द्र क्रोधमें आकर अपने स्वराज्यकी प्रेमसे पूजा करते हुए प्रजाको कँपानेवाले शत्रुरूप वृत्रकी ठुड्डीपर चारों ओरसे, वज्रसे प्रहार करता है और बहनेके लिये जलोंको प्रेरित करता है ॥

६ आनन्दित हुआ इन्द्र अपने स्वराज्यकी सदा पूजा करते हुए सैकडों धाराओंवाले वज्रसे इस वृत्रके ठुड्डीपर प्रहार करता है और मित्रोंके लिये अन्नकी प्राप्तिका मार्ग ढूंढना चाहता है ॥

७ हे पर्वतपर रहनेवाले वज्रधारी इन्द्र ! तेराही पराक्रम उत्कृष्ट है, जिस कारण तूने अपने स्वराज्यकी पूजा करते हुए ढूंढकर पकडे उस कपटी शत्रुको कपटसे मारा ॥

८ हे इन्द्र ! तेरे वज्र वृत्रसे घिरे हुए नब्बे नावसे तरने योग्य जलके समीपके विविध स्थानोंमें ठहरे थे । तेरा पराक्रम महान् है और तेरी भुजाओंमें बहुत बल रखा हुआ है । इसलिये तू अपने स्वराज्यका सत्कार करते हुए (उस जल-रोधक वृत्रका नाश कर) ॥

९ हे मनुष्यो ! तुम सहस्रोंकी संख्यामें एक साथ मिलकर प्रभुकी प्रार्थना या पूजा करो। बीसों मिलकर उस इन्द्रकी प्रशंसा करो । सैकडों मिलकर इस प्रभुकी बारंबार प्रार्थना करो। इन्द्रके लिये यह स्तोत्र तैयार किया है । हे इन्द्र ! अपने स्वराज्यकी पूजा करते हुए तू उसका सेवन कर ॥

१० इन्द्रने बलसे वृत्रकी सेना और बलको नष्ट कर दिया । इसका वह पौरुष बहुतही बडा है । उसने अपने स्वराज्यकी पूजा करते हुए वृत्रको मारा और जलोंको बहनेके लिये खुला छोड दिया ।

इमे चित् तव मन्यवे वेपेते भियसा मही ।
यदिन्द्र वज्रिन्नोजसा वृत्रं मरुत्वाँ अवधीरर्चन्ननु स्वराज्यम् ११
न वेपसा न तन्यतेन्द्रं वृत्रो वि बीभयत् ।
अभ्येनं वज्र आयसः सहस्रभृष्टिरायतार्चन्ननु स्वराज्यम् १२
यद् वृत्रं तव चाशनिं वज्रेण समयोधयः ।
अहिमिन्द्र जिघांसतो दिवि ते बद्बधे शवोऽर्चन्ननु स्वराज्यम् १३
अभिष्टने ते अद्रिवो यत् स्था जगच्च रेजते ।
त्वष्टा चित् तव मन्यव इन्द्र वेविज्यते भियार्चन्ननु स्वराज्यम् १४
नहि नु यादधीमसीन्द्रं को वीर्या परः ।
तस्मिन्नृम्णमुत क्रतुं देवा ओजांसि सं दधुरर्चन्ननु स्वराज्यम् १५
यामथर्वा मनुष्पिता दध्यङ् धियमत्नत ।
तस्मिन् ब्रह्माणि पूर्वथेन्द्र उक्था समग्मतार्चन्ननु स्वराज्यम् १६

---

११ (हे) वज्रिन् इन्द्र ! स्व-राज्यं अनु अर्चन् यत् मरुत्वान् (त्वं) ओजसा वृत्रं अवधीः (तदा) इमे चित् मही तव मन्यवे भियसा वेपेते ॥

१२ वृत्रः न वेपसा न तन्यता इन्द्रं वि बीभयत्। (इन्द्रेण) स्व-राज्यं अनु अर्चन् एनं आयसः सहस्र-भृष्टिः वज्रः अभि आयत ॥

१३ (हे) इन्द्र ! यत् स्व-राज्यं अनु अर्चन् वृत्रं अशनिं च तव वज्रेण सं-अयोधयः (तदा) अहिं जिघांसतः ते शवः दिवि बद्बधे ॥

१४ (हे) अद्रि-वः इन्द्र ! स्व-राज्यं अनु अर्चन् (वृत्रं हंसि)। यत् ते अभि-स्तने स्थाः जगत् च रेजते (तदा) त्वष्टा चित् भिया तव मन्यवे वेविज्यते ॥

१५ (इन्द्रः) स्व-राज्यं अनु अर्चन् (वृत्रं हन्ति)। यात् नहि नु अधि-इमसि । परः इन्द्रे वीर्या कः (जानीयात्) ? देवाः तस्मिन् ओजांसि नृम्णं उत क्रतुं सं दधुः ॥

१६ (इन्द्रः) स्व-राज्यं अनु अर्चन् (वृत्रं हन्ति)। अथर्वा, पिता मनुः, दध्यङ् (च) यां धियं अत्नत पूर्व-था तस्मिन् इन्द्रे ब्रह्माणि उक्था सं अग्मत ॥

११ हे वज्रधारी इन्द्र ! अपने स्वराज्यकी पूजा करते हुए जब वीरोंको साथी बनानेवाले तूने अपने बलसे वृत्रका वध किया, उस समय ये बडे दोनों लोक तेरे क्रोधके सम्मुख भयसे काँपने लगे ।

१२ वृत्र न अपने कम्पन और नहीं अपनी गर्जनासे इन्द्रको डरा सका । इसके विपरीत, जो इन्द्र स्व-राज्यकी पूजा करनेमें लगा हुआ था, उसके द्वारा इस वृत्रकी ओर लोहेका सहस्रों धारोंवाला वज्र फेंका गया ॥

१३ हे इन्द्र ! जिस समय अपने स्वराज्यकी पूजा करते हुए तूने वृत्र और उसके विद्युत् जैसे तीक्ष्ण शस्त्रपर अपने वज्रसे प्रहार किया, उस समय वृत्रको मारनेकी इच्छावाले तुझ इन्द्रका बल प्रकाशमय लोकमें भी स्थिर हो गया ॥

१४ हे पर्वतपर रहनेवाले इन्द्र ! तू अपने स्वराज्यका सम्मान करते हुए वृत्रको मारता है । जब तेरे गर्जनेपर स्थावर और जंगम दोनों प्रकारके पदार्थ काँप उठते हैं, तब त्वष्टा भी भयसे तेरे क्रोधके सम्मुख काँपने लगता है ।

१५ इन्द्र अपने स्वराज्यकी पूजा करता हुआ वृत्रको मारता है। उस सर्वत्र व्यापक इन्द्रको हम पूर्ण रूपसे नहीं जानते । हमसे बहुत दूर स्थानमें रहनेवाले इन्द्र और उसकी शक्तियोंको कौन जाने ? देवोंने उस इन्द्रमें बल, धन और कार्यशक्ति रखी है ॥

१६ इन्द्र अपने स्वराज्यकी पूजा करते हुए वृत्रको मारता है । अथर्वा पालनकर्ता मनु और दध्यङ्ने जिस बुद्धिको फैला दिया और पहलेकी भाँति उन्होंने उसी इन्द्रमें उन ज्ञानों और स्तोत्रोंको सुसंगत कर दिया, उसीके कार्यमें लगा दिया ।

स्वराज्यकी पूजा

इस इन्द्र-सूक्तमें १६ मंत्र हैं और प्रत्येक मंत्रमें '**स्वराज्यं अनु अर्चन्**' यह वाक्य है। स्वराज्यकी अर्चना करना और तदनुकूलतासे, उस स्वराज्यके लिये सहायकारी होनेवाले अन्य कार्य करना। प्रत्येक मंत्रमें यह मंत्रभाग इसलिये रखा है कि स्वराज्यकी पूजा करनेका भाव प्रत्येकके मनमें सुस्थिर रहे और कोई भी स्वराज्यसे विमुख न हो।

वेदके स्वराज्यका अर्थ बडा विशाल है। अपने ऊपर अपना शासन करनेका नाम स्वराज्य है। अपने शरीर, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्तपर अपनी पूर्ण रूपसे स्वाधीनता प्राप्त करना। ऐसे स्वयंशासक, जिनपर अपना स्वयंशासन पूर्णरूपसे सिद्ध हुआ है, जो संयमी, इन्द्रियदमन और आत्मसंयममें पूर्ण रूपसे सिद्ध हुए हैं, उनके द्वारा जो राज्यशासन चलाया जाता है, वह सच्चा स्वराज्य है। स्वयंशासित लोगोंद्वारा जहांका राज्यशासन होता है, वह वैदिक स्वराज्य है, इसीको ब्राह्मण ग्रंथोंमें 'स्वराज्य' कहा है। वह स्वराज्य इस भूमिपर स्वर्गधाम स्थापित करेगा। जो सर्वोपरि श्रेष्ठ राज्यशासन है वह यही है। इसमें ज्ञानी, मित्रवत् व्यवहार करनेवाले और व्यापक दृष्टिवाले स्वयंशासकही राज्यशासन करते हैं।

ऐसे स्वराज्यकी (स्वराज्यं अनु अर्चन्) अर्चना, पूजा, सत्कार करना चाहिये। हरएक मनुष्यको उचित है कि वह इस प्रकारकी स्वराज्यशासन-पद्धतिका आदर करे। इस तरहकी स्वराज्यपद्धतिका आदर करनेके लिये क्या करना चाहिये, वह इस सूक्तमें बताया है।

१ ओजसा अहिं पृथिव्याः निः शशाः (१)— अपने बलसे शत्रुको निःशेष शत्रुता छोड देनेतक सुशासनमें रख दिया। ऐसे नियंत्रणमें रख दिया कि जिससे वह प्रजाजनों को किसी प्रकारके कष्ट देनेमें समर्थ न रहा। दुष्टोंकी दुष्टता दूर करनेके लिये उनका नियमन करनाही उत्तम उपाय है। (न हीयते स अहिः) जो कम नहीं होता वह अहि कहलाता है।

२ ब्रह्मा वर्धनं चकार– ज्ञानीने इस बलका वर्धन किया था, जिस बलसे ये स्वराज्यके पालक और शासक शत्रुको अपने अधीन करनेमें सफल हुए। राष्ट्रके अन्दर ज्ञानी अपने राष्ट्रका बल बढानेकी आयोजना करें और नाना साधनोंसे नाना क्षेत्रोंमें शक्तिका संवर्धन करें। जब शक्ति संवर्धित होगी तब शत्रु दब जायँगे।

३ ओजसा वृत्रं निः जघन्थ (२)– बलसे शत्रुको मारा। यहां वृत्रका अर्थ 'घेरकर लडनेवाला शत्रु' ऐसा है। (वृणोति इति वृत्रः) जो घेरकर लडता है, उसका नाम वृत्र है। बलसेही शत्रुका नाश हो सकता है।

४ प्रेहि, अभीहि, धृष्णुहि (३)— आगे बढ, हमला कर, चारों ओरसे शत्रुको घेरकर युद्ध कर और शत्रुको भयभीत कर, प्रबल हमला करके शत्रुको घबराओ। ये युद्धकी पद्धतियाँ हैं।

५ न ते वज्रः नि यंसते— तेरे वज्रको निष्प्रभ या अफल करनेवाला कोई नहीं है, तेरे शत्रु तेरे शस्त्रका संयम नहीं कर सकते।

६ ते शवः नृम्णं– तेरा सामर्थ्य मानवोंका हित करनेमें लगनेवाला है, तेरा बल मनुष्योंको मनन करनेयोग्य प्रशंसनीय है।

७ वृत्रं हनः, अपः जयः— घेरनेवाले शत्रुका नाश-कर और जीवन देनेवाले जलप्रवाहको जीतकर अपने अधीन कर। शत्रुका नाश और जलको अपने अधीन करना यह नीति है। यदि जल शत्रुके अधीन रहा तो जय मिलनेकी कोई आशा नहीं। जल न रहा, तो प्याससे ही अपने सैनिक हैरान होंगे। इसलिये जलस्थानोंको अपने अधीन रखना योग्य है।

८ वृत्रं निः जघन्थ, जीवधन्याः अपः अव सृज (४)– शत्रुका नाश कर और जीवको धन्य करनेवाले जलोंको सबके हितके लिये खुले बहने दो।

९ दोधतः वृत्रस्य सानुं अभिक्रम्य वज्रेण अव जिघ्नते (५)– जनताको दुःख देकर हिलानेवाले शत्रुके उच्च भागपर आक्रमण करके आघात करता है और (**सर्माय अपः चोदयन्**) जलोंको प्रवाहित करता है।

१० शतपर्वणा वज्रेण सानौ अधि नि जिघ्नते (६)– सैकडों धाराओंवाले वज्रसे शत्रुके सिरपर घाव करता है और (**सखिभ्यः अन्धसः गातुं इच्छति**)– अपने अनुयायियोंके लिये पर्याप्त अन्न देनेका मार्ग प्राप्त करनेकी इच्छा करता है, पर्याप्त अन्न मिलनेका सुयोग्य मार्ग ढूंढता है।

११ मायिनं मृगं मायया अवधीः (७)– कपटी, छली शत्रुको कपटसे अथवा अत्यंत कुशलतासे मारता है। माया= कपट, छल, कुशलता, प्रवीणता, कौशल्य। मृग=

जो शत्रु ढूंढकर निकाला जाता है। (तुभ्यं वीर्यं अनुत्तमं)- तेरा पराक्रम अत्यंत उत्तम है, शत्रुका नाश करनेमें जो तुमने पराक्रम दिखाया वह अद्वितीय है।

१२ ते वज्रासः नाव्याः नवतिं अनु वि आस्थिरन् (८)- तुम्हारे वज्र नौकासे जानेयोग्य नव्वे नदियोंके समीपके देशोंमें स्थिर हो चुके हैं, प्रभावी हो गये हैं अर्थात् तुमने शत्रुके नव्वे नगर हमला करके अपने अधिकारमें लाये हैं। (ते बाह्वोः बलं हितं)- तेरे बाहुओंमें बहुत बल है।

१३ सैकडों और सहस्रोंकी संख्यामें इकट्ठे मिलकर प्रभुकी उपासना करो और स्वराज्यको स्थापन करो। (मं. ९)

१४ इन्द्रः सहसा वृत्रस्य तविषीं सहः च निः अहन् (१०)— इन्द्रने अपने बलसे शत्रुकी सेना और उसके सब सामर्थ्यका नाश किया। (अस्य तत् पौंस्यं महत्) इस वीरका वह शत्रुनाशक बल बडाभारी है।

१५ वृत्रं जघन्वान्, अपः असृजत्- शत्रुका वध किया और जलको खुला छोड दिया।

१६ आयसः सहस्रभृष्टिः वज्रः अभि आयत (१२) लोहेका सौ धाराओंवाला वज्र उस वीरने शत्रुपर फेंक दिया,

१७ वृत्रः न वेपसा, न तन्यता इन्द्रं वि बीभयात्- वृत्र अपनी गर्जनासे और अपने वेगसे इन्द्रको भयभीत न कर सका। शत्रुके किसी भी प्रकारसे वीरोंको भय प्राप्त न होवे, अपने वीर निर्भय हों।

१८ शत्रुपर विद्युत्प्रहार और वज्रप्रहार किया, उस समय बडा बल प्रकट हुआ। (मं.१३)

१९ तेरी गर्जना होनेपर स्थावर जंगम जगत् कांपता है और त्वष्टा भी तेरे सामने कांपता है। (१४)

२० देवाः तस्मिन् ओजांसि नृम्णं उत क्रतुं संदधुः (१५)- सब देवोंने उसमें बल, वीर्य और कर्तृत्वशक्ति रखी है। शत्रुको परास्त करनेके लिये बल, वीर्य, और कर्तृत्वशक्ति अपनेमें संघटित करनी चाहिये, इसीसे शत्रुका पराभव होता है।

स्वराज्यकी पूजा अर्चना किस रीतिसे होती है, इसका वर्णन इस तरह इस सूक्तमें है। प्रथम ज्ञानकी वृद्धि राष्ट्रमें करनी चाहिये। शस्त्रास्त्र पर्याप्त प्रमाणमें उत्पन्न करने चाहिये। उन शस्त्रोंका उपयोग करनेमें प्रवीण वीर निर्माण करने चाहिये। ये वीर शत्रुपर प्रबल हमला करें, शत्रुका पराभव करें, उसका नाश करें अथवा उसको ऐसा दबावे कि जिससे वह फिर न उठ सके। जलप्रवाह और जलस्थान अपने अधिकारमें रखे, कभी शत्रुके अधीन न होने पावें। अपने शस्त्र शत्रुके शस्त्रोंसे अधिक सामर्थ्यवान् बनावें। शत्रु कपट करनेवाला हो तो कपटसेही उसका नाश करें।

स्वराज्यके लिये कैसा प्रयत्न करना चाहिये, इसकी कुछ कल्पना इस सूक्तके मननसे आ सकती है।

वज्र

वज्र एक अस्त्र है, यह शत्रुपर दूरसे फेंका जाता है। यह (आयसः) लोहा या फौलादसे बनाया जाता है। इसमें (शतभृष्टिः) सौ नोकदार तथा धारावाले टुकडे जोडे जाते हैं, बिजली जैसा यह शस्त्र चमकता है। उत्तम फौलादके विना यह बन नहीं सकता। देशमें जब उत्तम फौलाद बनेगा तब वज्र बन सकेगा। अर्थात् यह वज्र एक अवस्थातक उद्योगकी वृद्धि बताता है। त्वष्टा नाम कारीगरका है, जो ये शस्त्र बनाता है।

(नाव्याः नवति) नौकासे पार होनेयोग्य नदियोंके तीरपर नव्वे नगरियां या किले शत्रुको परास्त करके लेनेका वर्णन मं.८ में है। नौकासे पार करनेवाली नदियां सिन्धु, गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्रा ये हैं। इनके तटपर नव्वे किले या नगर बताते हैं कि यह प्रदेश बडाही विस्तृत है, जिसमें स्वराज्य स्थापन किया गया था और स्वराज्यशासनके कारण जनता सुखमें थी। सब लोग स्वराज्यका सत्कार करते थे और सब लोग शत्रुको दूर करनेमें अपना भाग यथासांग पूर्ण रूपसे करते थे, स्वराज्यकी सुरक्षा दक्षतासे करते थे।

अथर्वा, मनु, दधीची

अथर्वा, (मनु) मनुष्पिता, और दधीची ऋषि इन तीन ऋषियोंके नाम इस सूक्तके १६ वे मंत्रमें आये हैं।

स्वराज्य शब्दका मूल अर्थ 'निज तेज' है। अग्नि, विद्युत्, सूर्यके तेजके लिये यह शब्द प्रयुक्त होता है। राज्यशासन मानवका तेजही है, इसलिये राज्यशासनको स्वराज्य कहते हैं।

अब इन्द्र प्रकरणमें द्वितीय सूक्त देखिये–

(८) निडर वीर

(ऋ. १।८१) गोतमो राहूगणः । इन्द्रः । पंक्तिः । *

इन्द्रो मदाय वावृधे शवसे वृत्रहा नृभिः ।
तमिन्महत्स्वाजिषूतेमर्भे हवामहे स वाजेषु प्र नोऽविषत् १
असि हि वीर सेन्योऽसि भूरि पराददिः ।
असि दभ्रस्य चिद् वृधो यजमानाय शिक्षसि सुन्वते भूरि ते वसु २
यदुदीरत आजयो धृष्णवे धीयते धना ।
युक्ष्वा मदच्युता हरी कं हनः कं वसौ दधोऽस्माँ इन्द्र वसौ दधः ३
क्रत्वा महाँ अनुष्वधं भीम आ वावृधे शवः ।
श्रिय ऋष्व उपाकयोर्नि शिप्री हरिवान् दधे हस्तयोर्वज्रमायसम् ४
आ पप्रौ पार्थिवं रजो बद्बधे रोचना दिवि ।
न त्वावाँ इन्द्र कश्चन न जातो न जनिष्यतेऽति विश्वं ववक्षिथ ५

अन्वयः— १ वृत्र-हा इन्द्रः मदाय शवसे नृ-भिः ववृधे, तं इत् महत्-सु आजिषु उत ईं अर्भे हवामहे । सः वाजेषु नः प्र अविषत् ॥

२ हे वीर ! सेन्यः असि, भूरि परा-ददिः असि । दभ्रस्य चित् वृधः असि । (त्वं) यजमानाय शिक्षसि । सुन्वते ते वसु भूरि ॥

३ यत् आजयः उत्-ईरते, (तदा) धृष्णवे धना धीयते । (हे) इन्द्र ! मद-च्युता हरी युक्ष्व । (त्वं) कं हनः, कं वसौ दधः । अस्मान् वसौ दधः ॥

४ क्रत्वा महान् भीमः अनु-स्वधं शवः आ ववृधे । ऋष्वः शिप्री हरि-वान् (इन्द्रः) उपाकयोः हस्तयोः श्रिये आयसं वज्रं नि दधे ॥

५ (हे) इन्द्र ! पार्थिवं रजः आ पप्रौ । दिवि रोचना बद्बधे । (सम्प्रति) कः चन त्वा-वान् न । (त्वा-वान्) न जातः, न जनिष्यते । (त्वं) विश्वं अति ववक्षिथ ॥

अर्थ– १ वृत्रनाशक इन्द्र आनन्द और बलके लिये मनुष्यों द्वारा बढाया जाता है। हम उसी इन्द्रको बडे युद्धों और उसीको छोटे युद्धोंमें बुलाते हैं। वह युद्धोंमें हमारी रक्षा करे।

२ हे वीर! तू सेनासे युक्त है। बहुत धन दान देनेवाला है। तू छोटेको भी बडा करनेवाला है। तू यज्ञ करनेवालेके लिये धन देता है। सोमयाग करनेवालेको देनेके लिये तेरे पास बहुत धन है।

३ जिस समय युद्ध छिड जाते हैं, तब तेरे द्वारा निडर वीरके लिये धन दिया जाता है। हे इन्द्र ! तू अपने मद चुवानेवाले घोडोंको रथमें जोड। तूने किसी दुष्टको मारा और किसीको धनके बीचमें रखा, धनवान् बना दिया। तूने हमें धनके बीच रख धनवान् बनाया है।

४ क्रियाशील होनेके कारण श्रेष्ठ और भयङ्कर प्रभाववान् इन्द्रने योग्य अन्नके सेवनसे अपना बल बढा दिया। उस दर्श-नीय, शिरस्त्राणधारी, घोडेवाले इन्द्रने अपने समीपवर्ती दोनों हाथोंमें श्रीकी प्राप्तिके लिये लोहेका बना हुआ वज्र धारण किया है।

५ हे इन्द्र ! तूने अपनी व्यापकतासे पार्थिव लोकोंको पूरा भर दिया है। तूने दिव् लोकमें प्रकाशमय लोक स्थापित किये हैं। कोई भी तेरे समान नहीं है। तेरे समान न कोई उत्पन्न हुआ था और न आगे उत्पन्न होगा। तूही सम्पूर्ण विश्वको चला रहा है।

* ऋ. १।८१।१-३ तथा ७-९ ये छः मंत्र अथर्ववेदमें २०।५६।१-६ में हैं।

यो अर्यो मर्तभोजनं पराददाति दाशुषे ।
इन्द्रो अस्मभ्यं शिक्षतु वि भजा भूरि ते वसु भक्षीय तव राधसः ६
मदेमदे हि नो दर्दिर्यूथा गवामृजुक्रतुः ।
सं गृभाय पुरू शतोभयाहस्त्या वसु शिशीहि राय आ भर ७
मादयस्व सुते सचा शवसे शूर राधसे ।
विद्मा हि त्वा पुरूवसुमुप कामान्त्ससृज्महेऽथा नोऽविता भव ८
एते त इन्द्र जन्तवो विश्वं पुष्यन्ति वार्यम् ।
अन्तर्हि ख्यो जनानामर्यो वेदो अदाशुषां तेषां नो वेद आ भर ९

६ यः अर्यः इन्द्रः दाशुषे मर्त-भोजनं परा-ददाति, (सः) अस्मभ्यं शिक्षतु । (हे इन्द्र !) ते भूरि वसु वि भज । तव राधसः भक्षीय ॥

७ (हे इन्द्र !) ऋजु-क्रतुः (त्वं) गवां यूथा मदे-मदे हि नः दर्दिः (असि) । पुरु शता वसु उभयाहस्त्या सं गृभाय । शिशीहि, रायः आ भर ॥

८ (हे) शूर ! शवसे राधसे सुते सचा मादयस्व । त्वा पुरु-वसुं विद्म हि । कामान् उप ससृज्महे । अथ नः अविता भव ॥

९ (हे) इन्द्र ! एते जन्तवः ते विश्वं वार्यं पुष्यन्ति । अर्यः अदाशुषां जनानां अन्तः वेदः ख्यः हि । तेषां वेदः नः आ भर ॥

६ जो स्वामी इन्द्र दाताके लिये मनुष्योंके भोगने योग्य धन देता है, वह हमारे लिये धनका दान करे । हे इन्द्र ! तू अपना विपुल धन हमें बाँट । मैं तेरे धनका उपभोग करूँ ॥

७ हे इन्द्र! सरल कर्मवाला तू गायोंके झुण्ड प्रत्येक आनन्दके समय हमें देनेवाला है । तू बहुत सैकडों प्रकारका धन दोनों हाथोंसे ग्रहण कर । तू वीरता करके ऐश्वर्यका सम्पादन कर ॥

८ हे शूर ! बल और धनके लिये तू यज्ञस्थानमें एक साथ आनन्दित हो । हम तुझ विपुल सम्पत्तिवाले इन्द्रको निश्चय जानते हैं । तेरे सामने अपनी कामनाओंको रखते हैं, अब तू हमारा रक्षक हो ॥

९ हे इन्द्र ! ये सब प्राणी तेरे सम्पूर्ण वरणीय धनको बढाते हैं । सबका स्वामी इन्द्र तू दान न करनेवाले लोगोंके गुप्त धन जानताही है । तू उनका धन हमें ला दे ।

बलकी वृद्धि और शत्रुका नाश

यह ऋग्वेदका १।८१ वाँ सूक्त है । इसका देवता इन्द्र है । इन्द्रदेवता बलकी वृद्धि और शत्रुका नाश करनेके लिये प्रसिद्ध है । इस सूक्तके बोधवचन ये हैं—

१ वृत्रहा इन्द्रः शवसे नृभिः ववृधे (१)- शत्रुका नाश करता है इसलिये इन्द्रदेवताकी प्रशंसा बल बढाने-के लिये करते हैं । मनुष्य इंद्रके सूक्तोंसे अपना बल बढानेके और शत्रुका नाश करनेके उपाय जानते हैं । इन्द्र सूक्त पढनेका यह उद्देश्य है ।

२ महत्सु आजिषु उत अर्भे इन्द्रं हवामहे –बडे युद्धोंमें तथा छोटे संघर्षमें अपनी सहायताके लिये इन्द्रकी प्रार्थना करते हैं । इन्द्रकी स्तुतिके मंत्र पढनेसे युद्धमें विजयी होनेके उपाय मालूम हो सकते हैं ।

३ सः वाजेषु नः प्र अविषत्– वह युद्धोंमें हमारी रक्षा करे ।

४ हे वीर ! त्वं सेन्यः असि (२)- हे वीर ! तू सेनासे युक्त हो, वीर सेनाके साथ रहता है । अथवा वीर सैन्यके साथ रहे ।

५ दभ्रस्य वृधः असि– छोटेको बडा करता है ।

६ भूरि परा-ददिः असि– तू बहुत दान देता है । वीर बहुत दान देवे ।

७ यत् आजयः उदीरते, धृष्णवे धना धीयते (३)- जब युद्ध छिड जाते हैं, तब निडर वीरके लिये धन देना चाहिये । जिस धनसे वह प्रसन्न होवे और सेना आदि युद्धके साधन अपने पास पर्याप्त प्रमाणमें रखे ।

८ मदच्युता हरी युक्ष्व– वीरके रथके लिये मदमत्त घोडे जोते जाय ।

९ कं हनः ? कं वसौ दधः ?- किसका वध किया जावे ? और किसको धनका उपहार दिया जावे ? यह सोचना चाहिये। जो शत्रु है उसका वध करना चाहिये, और जो अपना सहायक मित्र है उसको धनका दान करना उचित है। ऐसा कभी नहीं होना चाहिये कि अपना मित्र मारा जाय और शत्रु धनवान् बन जाय।

१० क्रत्वा महान् भीमः (४)- प्रयत्नसे महा भयंकर वीर होता है। पुरुषार्थ करनेवाला बडा वीर होता है।

११ अनुस्वधं शवः आ ववृधे- अन्नके अनुसार बल बढता है। जैसा अन्न खाया जाय वैसा शरीरका बल हो जाता है।

१२ शिप्री हस्तयोः आयसं वज्रं श्रिये नि दधे- शिरस्त्राण धारण करनेवाला वीर अपने हाथोंमें फौलादका शस्त्र यशप्राप्तिके लिये धारण करता है।

१३ अर्यः दाशुषे मर्तभोजनं परा-ददाति (६)-स्वामी दाताको मानवोंके योग्य भोजन देता है। स्वामी अपने सेवकोंके लिये जीवनवेतन देता है। जो ऐसा देता है वही सच्चा (अर्य) श्रेष्ठ स्वामी कहलाता है।

१४ ते भूरि वसु वि भज— तेरे पास बहुत धन होनेपर उसको विशेष रूपसे दान कर।

१५ ऋजु-क्रतुः गवां यूथा ददिः (७)— सरल भावसे कर्म करनेवाला गायोंके झुण्डोंका दान देवे।

१६ पुरु शता वसु उभयाहस्त्या सं गृभाय— सैकडों प्रकारका बहुत धन दोनों हाथोंमें ले लो।

१७ शवसे राधसे सधा मादयस्व (८)— बलको बढानेके लिये और धनकी वृद्धिके लिये अपने साथियोंके साथ आनन्द प्रसन्नके समयोंमें सहभागी होते रहो।

१८ नः अविता भव- हमारा रक्षक हो।

१९ अर्यः अदाशुषां जनानां अन्तः वेद्‌ः क्षयः (९)- स्वामी कञ्जूस मनुष्योंके सुरक्षित रखे धनको जानता है अर्थात् उसको प्राप्त करके सबकी भलाईके लिये प्रयुक्त करता है।

इस तरह इस सूक्तमें अनेक बोधवचन हैं। इस सूक्तमें केवल वीरताकी और युद्धकीही बातें नहीं हैं, प्रत्युत धनका एकके पास संग्रह न हो, वह सब धन सब जनताके पास यथायोग्य रीतिसे विभक्त होता जाय। सबको आवश्यकताके अनुसार धन मिले। इस विषयके अनेक निर्देश इस सूक्तमें हैं। वे मननके योग्य है।

(९) घरमें रहो

(ऋ. १।८२) गोतमो राहूगणः। इन्द्रः। पंक्तिः; ६ जगती।

उपो षु शृणुही गिरो मघवन् मातथा इव।
यदा नः सूनृतावतः कर आदर्थयास इद् योजा न्विन्द्र ते हरी १
अक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया अधूषत।
अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी २

अन्वयः— (हे) मघ-वन् ! गिरः उपो सु शृणुहि। अतथा इव मा (भूः)। यदा (त्वं) नः सूनृता-वतः करः, आत् अर्थयासे इत्, (हे) इन्द्र ! ते हरी योज नु॥

२ स्व-भानवः विप्राः अक्षन्, अमीमदन्त हि, प्रियाः अव अधूषत, नविष्ठया मती अस्तोषत। (हे) इन्द्र ! ते हरी योज नु॥

अर्थ— १ हे धनवाले इन्द्र ! तू हमारी प्रार्थनाओंको पास बैठकर सुन। परायेके समान मत हो। जब तू हमें मीठी वाणीवाला करता है, तब हमारा स्तोत्र चाहताही है। हे इन्द्र ! तू अपने घोडे शीघ्र जोड (और यहां हमारे पास शीघ्र आ)॥

२ हे इन्द्र ! अपने तेजसे तेजस्वी हुए बुद्धिमान् लोगोंने (तेरा दिया अन्न) खाया और वे बहुत आनन्दित हुए। उस आनन्दमें उन्होंने अपने प्रिय (मस्तक तेरे आदरके लिये) कँपाये। फिर प्रशंसासे भरपूर स्तोत्रसे तेरी प्रशंसा की। हे इन्द्र ! यज्ञमें जानेके लिये तू अपने घोडे शीघ्र जोड।

सुसंदृशं त्वा वयं मघवन् वन्दिषीमहि ।
प्र नूनं पूर्णवन्धुरः स्तुतो याहि वशाँ अनु योजा न्विन्द्र ते हरी ३
स घा तं वृषणं रथमधि तिष्ठाति गोविदम् ।
यः पात्रं हारियोजनं पूर्णमिन्द्र चिकेतति योजा न्विन्द्र ते हरी ४
युक्तस्ते अस्तु दक्षिण उत सव्यः शतक्रतो ।
तेन जायामुप प्रियां मन्दानो याह्यन्धसो योजा न्विन्द्र ते हरी ५
युनज्मि ते ब्रह्मणा केशिना हरी उप प्र याहि दधिषे गभस्त्योः ।
उत् त्वा सुतासो रभसा अमन्दिषुः पूषण्वान् वज्रिन्त्समु पत्न्यामदः ६

३ (हे) मघ-वन् ! वयं त्वा सु-संदृशं वन्दिषीमहि । नूनं पूर्ण-वन्धुरः स्तुतः वशान् अनु प्र याहि । (हे) इन्द्र ! ते हरी योज नु ॥

४ (हे) इन्द्र ! यः हारि-योजनं पूर्णं पात्रं चिकेतति, सः घ तं गो-विदं वृषणं रथं अधि तिष्ठाति । (हे) इन्द्र ! ते हरी योज नु ॥

५ (हे) शत-क्रतो ! ते दक्षिणः उत सव्यः युक्तः अस्तु । तेन अन्धसः मन्दानः प्रियां जायां उप याहि । (हे) इन्द्र ! ते हरी योज नु ॥

६ (हे) वज्रिन् ! ते केशिना हरी ब्रह्मणा युनज्मि । उप प्र याहि, गभस्त्योः दधिषे । रभसाः सुतासः त्वा उत् अमन्दिषुः । पूषण्-वान् (त्वं) पत्न्या सं उ अमदः ॥

३ हे ऐश्वर्य-सम्पन्न इन्द्र ! हम लोग तुझ सुरूप इन्द्रकी वन्दना करते हैं। निश्चयसे धन-धान्यसे भरपूर रथवाला तू प्रशंसा प्राप्त करता हुआ भक्तोंकी ओर जा। हे इन्द्र ! तू अपने घोडोंको जोड ही।

४ हे इन्द्र ! जो मनुष्य जिसके पीनेपर रथमें घोडे जोडे जायँ ऐसा भरा हुआ पात्र तुझे समर्पित करता है, वही मनुष्य उस गौएँ प्राप्त करानेवाले सुखदायी रथपर बैठता है। हे इन्द्र ! तू अपने घोडे रथमें शीघ्र जोड ॥

५ हे सैकडों कर्म करनेवाले इन्द्र ! तेरा दाहिना और बायाँ घोडा रथमें जोडा हुआ हो। उस रथसे तू अन्नसे तृप्त होकर प्रिय पत्नीके पास जा। हे इन्द्र! तू अपने घोडोंको शीघ्र जोड ॥

६ हे वज्रधारी इन्द्र ! तेरे केशवाले घोडे, मैं अपने स्तोत्रसे रथमें जोडता हूँ। तू अपने घर जा, तू हाथोंमें घोडोंकी रस्सियाँ धारण करता है। वेगसे बहनेवाले सोम-रसोंने तुझे तृप्त किया है। (घरपर) पुष्टिसे युक्त हुआ तू अपनी पत्नीके साथ सोमसे भली-भाँति तृप्त हो।

रथ जोडो

इस सूक्तमें **'हे इन्द्र ! ते हरी योज'**- हे इन्द्र ! तेरे घोडे रथके साथ जोड, यह आज्ञा प्रत्येक मंत्रमें है। वीर अपना रथ जोडकर प्रजाकी रक्षाका कार्य करनेके लिये सदा तैयार रहे यह इसका आशय है। अन्तिम मन्त्रमें—

'ते हरी ब्रह्मणा युनज्मि'- तेरे घोडे स्तोत्रपाठके साथ मैं जोडता हूँ। यहां उपासक कहता है कि हे इन्द्र ! तेरे रथके साथ घोडे मैं जोडता हूं। अर्थात् यहां ऐसा प्रतीत होता है कि यहां इन्द्रकी मूर्तिका महोत्सव है, उसमें रथमें इन्द्रकी प्रतिमा रखी जाती होगी और मंत्र बोलकर भक्त उस रथको घोडे जोतते होंगे। इन्द्रके वर्णनमें इन्द्रका रथ, उसके घोडे, उसके शस्त्रास्त्र, उसके कपडे आदिकोंका वर्णन आता है, यह वर्णन परमात्मा होगा तो आलंकारिक मानना पडेगा, वीरका होगा तो किसी जीवित मानव पुरुषका होगा, अन्यथा वह केवल मूर्तिकाही मानना पडेगा। इस समय हम इस विषयमें विशेषरूपसे कुछ कह नहीं सकते। पर देवताओंके वर्णनोंमें ऐसे वर्णन आते हैं, जो शंका उत्पन्न करते हैं, इस विषयमें अधिक विचार होना चाहिये, जो अनेक सूक्तोंके मननके उपरान्तही होना स्वाभाविक है।

प्रिय पत्नी

इस मंत्रमें प्रिय पत्नीका उल्लेख है। वेदमें स्त्रियोंके वर्णन बहुतही कम है, जहां वे है वहां बडी मर्यादाके साथ आते हैं।

'तेन अन्धसः मन्दानः प्रियां जायां उप याहि । (मं. ५)'– उस अपने रथपर आरूढ होकर, तथा अन्नसे तृप्त होकर, अपनी प्रिय पत्नीके पास जा । अर्थात् रथपरसे यज्ञमे आकर बैठ, यज्ञका अवलोकन कर, यज्ञीय अन्नका सेवन कर और पश्चात् उसी रथपर सवार होकर, अपने घरमें पहुंच कर अपनी प्रिय जायाके पास जा और उससे वार्तालाप आदि कर तथा और देखिये–

'उप प्र याहि, गभस्त्योः दधिषे । सुतासः त्वा उत् अमन्दिषुः । (त्वं) पत्न्या सं अमदः (मं. ६)- तू अपने घर जा, (जानेके समय) घोडोंके लगाम हाथमें पकडो, सोमरस पीकर तुझे आनन्द हुआ है । (अब तू घरमें जाकर अपनी) पत्नीसे मिलकर आनन्द कर, आनन्दित हो ।

यहां इन्द्रकी धर्मपत्नीका उल्लेख है । पर पत्नीका नाम यहां नहीं है । **'इन्द्राणी, शची'** ये नाम अन्यत्र अन्य मन्त्रोंमें आये हैं । इन्द्रको **"कौशिक"** कहा है । देखो मधुच्छन्दा ऋषिका दर्शन (ऋ.१।१०।११) कुशिकका पुत्र कुशिकके गोत्रमें उत्पन्न अथवा कुशिकोंपर कृपा करनेवाला ऐसे इसके अर्थ होना संभवनीय है ।

(१०) यज्ञका मार्ग

(ऋ. १।८३; अथर्व. २०।२५।१-६) गोतमो राहूगणः । इन्द्रः । जगती ।

अश्वावति प्रथमो गोषु गच्छति सुप्रावीरिन्द्र मर्त्यस्तवोतिभिः ।
तामित् पृणक्षि वसुना भवीयसा सिन्धुमापो यथाऽभितो विचेतसः १
आपो न देवीरुप यन्ति होत्रियमवः पश्यन्ति विततं यथा रजः ।
प्राचैर्देवासः प्र णयन्ति देवयुं ब्रह्मप्रियं जोषयन्ते वरा इव २
अधि द्वयोरदधा उक्थ्यं१ वचो यतस्रुचा मिथुना या सपर्यतः ।
असंयत्तो व्रते ते क्षेति पुष्यति भद्रा शक्तिर्यजमानाय सुन्वते ३

अन्वयः- १ (हे) इन्द्र ! तव ऊति-भिः सुप्र-अवीः मर्त्यः अश्ववति गोषु प्रथमः गच्छति । (त्वं) वि-चेतसः आपः अभितः सिन्धुं यथा तं इत् भवीयसा वसुना पृणक्षि ॥

२ (हे इन्द्र !) देवासः देवीः आपः न होत्रियं उप यन्ति । वि-ततं रजः यथा अवः पश्यन्ति । देव-युं प्राचैः प्र नयन्ति । वराः-इव ब्रह्म-प्रियं जोषयन्ते ॥

३ (हे इन्द्र !) या मिथुना यत-स्रुचा (त्वां) सपर्यतः, द्वयोः अधि उक्थ्यं वचः अदधाः । असं-यत्तः ते व्रते क्षेति पुष्यति । सुन्वते यजमानाय भद्रा शक्तिः (भवति) ॥

अर्थ— १ हे इन्द्र ! तेरी सुरक्षाओं द्वारा सुरक्षित हुआ भक्त मनुष्य बहुत घोडोंवाले और बहुत गौओंसे युक्त स्थान प्रथम प्राप्त करता है । तू चित्तको प्रसन्न करनेवाले जल सब ओरसे जैसे समुद्रको पहुंचते हैं, वैसे उसही भक्तको श्रेष्ठ धनसे पूर्ण करता है ।

२ हे इन्द्र ! दिव्य लोग दिव्य जलोंके पास जानेके समान यज्ञके समीप जाते हैं । वे फैले हुए विस्तृत यज्ञस्थानको देखते हैं । देवोंकी भक्ति करनेवालेको वे पूर्वकी ओर ले जाते हैं । और श्रेष्ठोंके समान ज्ञानसे प्रिय उपदेशका सेवन करते हैं ।

३ जो दो जुडे हुए अन्नपात्र तेरी पूजाके लिये रखे हैं, हे इन्द्र ! तूने उन दोनोंमें रखे अन्नका स्तुतिके वचनके साथ स्वीकार किया । युद्धके लिये उद्यत न होनेवाला मनुष्य भी तेरे नियममें रहनेसे सुरक्षित रहता और पुष्ट भी होता है । यज्ञ करनेवालेके लिये तेरी ओरसे मङ्गलकारी शक्ति दी जाती है ।

आदङ्गिराः प्रथमं दधिरे वय इद्धाग्नयः शम्या ये सुकृत्यया ।
सर्वं पणेः समविन्दन्त भोजनमश्वावन्तं गोमन्तमा पशुं नरः ४
यज्ञैरथर्वा प्रथमः पथस्तते ततः सूर्यो व्रतपा वेन आऽजनि ।
आ गा आजदुशना काव्यः सचा यमस्य जातममृतं यजामहे ५
बर्हिर्वा यत् स्वपत्याय वृज्यतेऽर्को वा श्लोकमाघोषते दिवि ।
ग्रावा यत्र वदति कारुरुक्थ्य१स्तस्येदिन्द्रो अभिपित्वेषु रण्यति ६

४ आत् ये इद्ध अग्नयः अङ्गिराः सु-कृत्यया शम्या प्रथमं वयः दधिरे, (ते) नरः पणेः सर्वं अश्व-वन्तं गो-मन्तं भोजनं पशुं आ सं अविन्दन्त ॥

५ अथर्वा प्रथमः यज्ञैः पथः तते । ततः व्रत-पाः वेनः सूर्यः आ अजनि । काव्यः उशना सचा गाः आ आजत् । (वयं) यमस्य जातं अमृतं यजामहे ॥

६ यत् सु-अपत्याय बर्हिः वा वृज्यते, अर्कः वा (यत्र) दिवि श्लोकं आ-घोषते, यत्र उक्थ्यः कारुः ग्रावा वदति, इन्द्रः तस्य इत् अभि-पित्वेषु रण्यति ॥

४ हे इन्द्र ! तब जिन अग्नि प्रज्वलित करनेवाले अङ्गिरा लोगोंने अपने उत्तम यज्ञकर्मसे सबसे प्रथम हवि तुझे दिया, उन पणिके नेताओंने सारे घोडों और गायोंसे युक्त पशुरूप धन प्राप्त किये ।

५ अथर्वाने सर्व प्रथम यज्ञोंके मार्गको फैला दिया । उसके पश्चात् व्रतका पालनकर्ता प्रिय सूर्यका उदय हुआ । तत्पश्चात् कविके पुत्र उशनाने पणिके यहासे एक साथही गौएँ बाहर हाँक दीं । हम उस शासन करनेके लिये उत्पन्न अमर इन्द्रकी पूजा करते हैं ।

६ जिसके घरमें उत्तम कर्मके लिये कुश काटे जाते हैं, सूर्यके उदयके बाद उसके प्रकाशमें श्लोक पढे जाते हैं, जहाँ प्रशंसनीय कुशल कारीगर (सोमके कूटनेके पत्थरके) शब्द करता है इन्द्र उसकेही अन्नोंमें आनन्द मानता है ।

अङ्गिरा, अथर्वा और उशना ऋषि

इस सूक्तमें आङ्गिरा और अथर्वा ऋषिके कर्तृत्वका वर्णन किया है । देखिये—

१ इद्धाग्नयः अङ्गिराः सुकृत्यया प्रथमं वयः दधिरे (४)–अङ्गिरा ऋषियोंने अग्नि प्रदीप्त करके उत्तम यज्ञ करते हुए उसमें प्रथम अन्नकी आहुतियां दीं । अङ्गिरसोंका यह उपक्रम बडाही प्रशंसनीय है ।

२ अथर्वा यज्ञैः प्रथमः पथः तते (५)- अथर्वा ऋषिने यज्ञोंके द्वारा सबसे प्रथम धर्मका यज्ञ मार्ग फैलाया ।

अथर्वाङ्गिरस् पद वेदमें आता है । इससे अङ्गिरा और अथर्वाका संबंध प्रतीत होता है । अङ्गिराने अग्नि प्रदीप्त करके उसमें अन्नकी आहुतियां देकर यज्ञ करनेकी विद्या प्रथम सिद्ध की और अथर्वाने इस यज्ञका चारों ओर खूब प्रचार किया ऐसा इन मंत्रोंसे पता लगता है ।

३ उशना काव्यः गाः आ आजत् (५)– कविपुत्र उशना ऋषिने गौओंको प्राप्त किया । अर्थात् इसने यज्ञमें गौओंके घृत आदिका हवन करना, गोदुग्धका सोममें मिलाना, दहीका सत्तुके साथ मिलाना आदिका प्रचार किया । यज्ञ-जीवनमें गौओंका बहुत संबंध इस ऋषिके समय आ-गया ।

यजमानका घर

यज्ञकर्ताके घरका यहां वर्णन उत्तम रीतिसे किया है–

१ यत् बर्हिः वृज्यते (६)- जहा दर्भ काटे जाते हैं, दर्भके आसन फैलाये जाते हैं, ।

२ अर्कः दिवि श्लोकं आघोषते- सूर्य प्रकाशमें, सूर्यके उदयके पश्चात् श्लोक—वेदमंत्रोंका-घोष किया जाता है ।

३ यत्र उक्थ्यः कारुः ग्रावा वदति- जहां प्रशंसनीय कारीगर—कुशलतासे यज्ञकर्म करनेवाला, मंत्रोंके रचयिता ऋषि मंत्र गाते हैं और सोम कूटनेके पत्थरोंका शब्द होता है।

यज्ञ जहां होते हैं वहां ये बातें होतीं हैं । आसन फैलाये जाते है, मंत्रपाठ होते हैं, सोम कूटनेका भाग्तिका शब्द सुनाई देता है । यह यज्ञस्थान है ।

इन्द्रसे गौओंकी प्राप्ति

इन्द्रकी सहायतासे गौवें प्राप्त होती हैं ऐसा यहां बहुतवार कहा है—

१ तव ऊतिभिः सुप्रावीः मर्त्यः अश्वावति गोषु प्रथमः गच्छति (१)- इन्द्रकी सुरक्षाओंसे सुरक्षित हुआ मनुष्य घोडों और गायोंके झुण्ड प्रथम प्राप्त करता है।

१ नरः पणेः सर्वं अश्वावन्तं गोमन्तं भोजनं पशुं आसं अविन्दन्त (४)- नेता लोग पणिसे सभी घोडे, गौवें और पशुको प्राप्त करता है और सब धन भी प्राप्त करता है।

यज्ञसे इन्द्रकी प्रसन्नता होती है, इन्द्रसे गौओंकी प्राप्ति होती है, इस तरह गौओंके घृतसे यज्ञ होते हैं और यज्ञोंसे सब जनताका कल्याण होता है। यज्ञके प्रवर्तनका यह फल है।

(११) दधीचीकी अस्थिसे वज्र

(ऋ. १।८४) गोतमो राहूगणः । इन्द्रः । १-६ अनुष्टुप्; ७-९ उष्णिक्; १०-१२ पंक्तिः; १३-१५ गायत्री; १६-१८ त्रिष्टुप्; (प्रगाथः=) १९ बृहती; २० सतोबृहती ।

असावि सोम इन्द्र ते शविष्ठ धृष्णवा गहि । आ त्वा पृणक्त्विन्द्रियं रजः सूर्यो न रश्मिभिः १
इन्द्रमिद्धरी वहतोऽप्रतिधृष्टशवसम् । ऋषीणां च स्तुतीरुप यज्ञं च मानुषाणाम् २
आ तिष्ठ वृत्रहन् रथं युक्ता ते ब्रह्मणा हरी । अर्वाचीनं सु ते मनो ग्रावा कृणोतु वग्नुना ३
इममिन्द्र सुतं पिब ज्येष्ठममर्त्यं मदम् । शुक्रस्य त्वाभ्यक्षरन् धारा ऋतस्य सादने ४
इन्द्राय नूनमर्चतोक्थानि च ब्रवीतन । सुता अमत्सुरिन्दवो ज्येष्ठं नमस्यता सहः ५
नकिष्ट्वद्रथीतरो हरी यदिन्द्र यच्छसे । नकिष्ट्वाऽनु मज्मना नकिः स्वश्व आनशे ६

अन्वयः— १ (हे) इन्द्र ! सोमः ते असावि । (हे) शविष्ठ धृष्णो ! (त्वं) आ गहि । इन्द्रियं सूर्यः न रश्मिभिः रजः त्वा आ पृणक्तु ॥

२ हरी ऋषीणां च स्तुतीः मानुषाणां च यज्ञं अप्रतिधृष्ट-शवसं इन्द्रं इत् उप वहतः ॥

३ (हे) वृत्र-हन् ! रथं आ तिष्ठ, ब्रह्मणा ते हरी युक्ता । ग्रावा वग्नुना ते मनः अर्वाचीनं सु कृणोतु ॥

४ (हे) इन्द्र ! इमं सुतं ज्येष्ठं अमर्त्यं मदं पिब । ऋतस्य सदने शुक्रस्य धाराः त्वा अभि अक्षरन् ॥

५ (हे ऋत्विजः) नूनं इन्द्राय अर्चत (तस्मै) उक्थानि च ब्रवीतन । सुताः इन्दवः अमत्सुः । ज्येष्ठं सहः नमस्यत ॥

६ (हे) इन्द्र ! यत् हरी यच्छसे, त्वत् रथि-तरः नकिः । मज्मना त्वा अनु नकिः । (अन्यः) सु-अश्वः (त्वां) नकिः आनशे ॥

अर्थ— १ हे इन्द्र ! यह सोम तेरे लिये निचोडा गया है। हे बलयुक्त शत्रु-नाशक इन्द्र ! तू यहाँ आ। तेरे लिये बना हुआ, यह सूर्य जैसे किरणोंसे आकाशको व्यापता है, वैसे तुझे यह सोमरस व्याप ले। (यह तेरे शरीरमें जावे।)

२ घोडे ऋषियोंके स्तोत्र और मनुष्योंके यज्ञके पास जिसका बल अटूट है ऐसे इन्द्रहीको ले जाते हैं, पहुंचाते हैं।

३ हे वृत्र-घातक इन्द्र ! तू रथपर चढकर बैठ। स्तोत्रके द्वारा तेरे घोडे रथमें जोड दिये गये हैं। ये सोम कूटनेके पत्थर अपनी वाणीसे तेरा मन इस ओर आकर्षित करें।

४ हे इन्द्र ! तू इस निचोडे हुए सर्वोत्तम अमर आनन्द-कारक रसको पी। यज्ञके स्थानमें बलवर्धक सोमकी धाराएँ तेरी ओर बह रही हैं।

५ हे ऋत्विक् लोगो ! निश्चय तुम इन्द्रकी पूजा करो और उसके लिये स्तोत्र पढो। ये निचोडे हुए सोम-रस इस इन्द्रको तृप्त करें। तुम इस बडे बलधारी इन्द्रको नमस्कार करो।

६ हे इन्द्र ! जिस कारण तू अपने घोडोंको उत्तमतासे चलाता है इस कारण तुझसे बडा रथी कोई नहीं। बलद्वारा तेरी समानता करनेवाला कोई नहीं। कोई दूसरा उत्तम घुड-सवार भी तुझे नहीं पा सकता।

य एक इद् विदयते वसु मर्ताय दाशुषे । ईशानो अप्रतिष्कुत इन्द्रो अङ्ग ×७
कदा मर्तमराधसं पदा क्षुम्पमिव स्फुरत् । कदा नः शुश्रवद् गिर इन्द्रो अङ्ग ×८
यश्चिद्धि त्वा बहुभ्य आ सुतावाँ आविवासति । उग्रं तत् पत्यते शव इन्द्रो अङ्ग ×९
स्वादोरित्था विषूवतो मध्वः पिबन्ति गौर्यः ।
या इन्द्रेण सयावरीर्वृष्णा मदन्ति शोभसे वस्वीरनु स्वराज्यम् +१०
ता अस्य पृशनायुवः सोमं श्रीणन्ति पृश्नयः ।
प्रिया इन्द्रस्य धेनवो वज्रं हिन्वन्ति सायकं वस्वीरनु स्वराज्यम् +११
ता अस्य नमसा सहः सपर्यन्ति प्रचेतसः ।
व्रतान्यस्य सश्चिरे पुरूणि पूर्वचित्तये वस्वीरनु स्वराज्यम् +१२
इन्द्रो दधीचो अस्थभिर्वृत्राण्यप्रतिष्कुतः । जघान नवतीर्नव ॐ१३

---

७ यः ईशानः अप्रति-स्कुतः इन्द्रः अङ्ग एकः इत् दाशुषे मर्ताय वसु वि-दयते ॥

८ इन्द्रः अराधसं मर्तं पदा क्षुम्पं-इव कदा स्फुरत् । नः गिरः अङ्ग कदा शुश्रवत् ॥

९ (हे इन्द्र !) यः चित् हि सुत-वान् बहु-भ्यः त्वा आ आ-विवासति । इन्द्रः अङ्ग तत् उग्रं शवः पत्यते ॥

१० याः स्व-राज्यं अनु वस्वीः इन्द्रेण स-यावरीः शोभसे वृष्णा मदन्ति (ताः) गौर्यः इत्था स्वादोः विषु-वतः मध्वः पिबन्ति ॥

११ अस्य इन्द्रस्य ताः पृशन-युवः प्रियाः पृश्नयः धेनवः सोमं श्रीणन्ति, स्व-राज्यं अनु वस्वीः सायकं वज्रं हिन्वन्ति॥

१२ ताः स्व-राज्यं अनु वस्वीः प्र-चेतसः पूर्व-चित्तये अस्य सहः नमसा सपर्यन्ति, अस्य पुरूणि व्रतानि (च) सश्चिरे ॥

१३ अप्रति-स्कुतः इन्द्रः दधीचः अस्थ-भिः नव नवतीः वृत्राणि जघान ॥

७ जिस शासकका शत्रु प्रतिकार कर नहीं सकते, वह इन्द्र शीघ्र अकेलाही दानी मनुष्यके लिये धन देता है ।

८ इन्द्र अदाता कंजूस मनुष्यको, पाँवसे सूखे पत्तोंके समान कब नष्ट कर देगा और हमारी बातोंको शीघ्रातिशीघ्र कब सुनेगा ?

९ हे इन्द्र ! जो सोम बनानेवाला बहुत देवोंमेंसे तेरीही विशेष परिचर्या करता है, वह तू इन्द्र शीघ्र उसके लिये अपना वह तीक्ष्ण बल देता है ।

१० जो अपने राज्यमेंही बसनेवाली शोभाके लिये इन्द्रके साथ चलनेवाली, सुख-दायी सोमसे आनन्दित होती हैं वे गौर वर्ण गायें इस प्रकार साथ मिलकर मीठे विशेष निचोडे सोम-रसका पान करती हैं ।

११ इस इन्द्रकी वे स्पर्शकी कामनावाली प्रिय नाना वर्णोंवाली गौएँ इन्द्रके लिये अपने दूधको सोममें मिलाती हैं । वे अपने राज्यमें बसानेवाली शत्रुपर प्राणान्त करनेवाले वज्रको भेजती हैं ।

१२ वे अपने राज्यको बसानेवाली और बुद्धिको बढानेवाली गौएँ सबसे प्रथम ज्ञानपूर्वक इस इन्द्रके बलकी अपने दूधरूपी अन्नसे सेवा करती हैं । उन्होंने इस इन्द्रके बहुत पराक्रमोंसे लाभ उठाया है ।

१३ जिसके सामने शत्रु नहीं ठहर सकता उस इन्द्रने दध्यङ्की अस्थियोंके वज्रसे निन्न्यानवेको मार दिया ।

× अथर्व २०।६३।४-६; + अथर्व २०।१०९।१-३; ॐ अथर्व २०।४१।१-३

इच्छन्नश्वस्य यच्छिरः पर्वतेष्वपश्रितम् । तद् विदच्छर्यणावति ॐ१४
अत्राह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम् । इत्था चन्द्रमसो गृहे ॐ१५
को अद्य युङ्क्ते धुरि गा ऋतस्य शिमीवतो भामिनो दुर्हृणायून् ।
आसन्निषून् हृत्स्वसो मयोभून् य एषां भृत्यामृणधत् स जीवात् १६
क ईषते तुज्यते को बिभाय को मंसते सन्तमिन्द्रं को अन्ति ।
कस्तोकाय क इभायोत रायेऽधि ब्रवत् तन्वे३ को जनाय १७
को अग्निमीट्टे हविषा घृतेन स्रुचा यजाता ऋतुभिर्ध्रुवेभिः ।
कस्मै देवा आ वहानाशु होम को मंसते वीतिहोत्रः सुदेवः १८
त्वमङ्ग प्र शंसिषो देवः शविष्ठ मर्त्यम् ।
न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मर्डितेन्द्र ब्रवीमि ते वचः १९
मा ते राधांसि मा त ऊतयो वसोऽस्मान् कदा चना दभन् ।
विश्वा च न उपमिमीहि मानुष वसूनि चर्षणिभ्य आ २०

१४ (इन्द्रः) पर्वतेषु अप-श्रितं यत् अश्वस्य शिरः इच्छन्, तत् शर्यणाऽवति विदत ॥

१४ इन्द्रने पर्वतोंमें पडे हुए घोडेके शिरको प्राप्त करनेकी इच्छा करनेके पश्चात् उस शिरको शर्यणावत् तालाबमें है ऐसा जान लिया ।

१५ अत्र अह गोः चन्द्रमसः गृहे इत्था त्वष्टुः अपीच्यं नाम अमन्वत ॥

१५ इसी गतिशील चन्द्रमाके घरमें, इस प्रकार सबके निर्माताके गुप्त प्रकाशको जाना ।

१६ अद्य ऋतस्य धुरि शिमी-वतः भामिनः दुः-हृणायून् आसन्-इषून् हृत्सु-असः मयः-भून् गाः कः युङ्क्ते ? यः एषां भृत्यां ऋणधत्, सः जीवात् ॥

१६ आज सत्यकी धुरामें कार्यतत्पर तेजस्वी अत्यन्त क्रोधी बाणोंका धारण और शत्रुके हृदयमें उन्हें छोडनेवाले सुखदायी गतिमान वीरोंको कौन रखता है ? जो इन्द्र इनके भरण-पोषणको करता है वह सदा जीता रहे ।

१७ कः ईषते तुज्यते (वा) । कः बिभाय । अन्ति सन्तं इन्द्रं कः कः मंसते । कः तोकाय, कः इभाय उत राये, (कः) तन्वे, कः जनाय अधि ब्रवत् ॥

१७ कौन भागता है ? कौन मारा जाता है ? कौन भय खाता है ? पास ठहरे हुए इन्द्रको कौन जानता है ? कौन पुत्रके लिये, कौन हाथी और ऐश्वर्यके लिये, कौन शरीर-सुखके लिये और कौन मनुष्योंके सुखके लिये वक्तृत्व करता है ?

१८ कः हविषा घृतेन अग्निं ईट्टे । (कः) ध्रुवेभिः ऋतुभिः स्रुचा यजातै । देवाः कस्मै होम आशु आ वहान् । कः वीति-होत्रः सु-देवः (इन्द्रं) मंसते ॥

१८ कौन हवि और घीसे अग्निकी पूजा करता है ? सदा ऋतु और स्रुचासे कौन यज्ञ करता है ? देव किसके लिये मांगा हुआ धन शीघ्र ला देते हैं ? कौन दाता तेजस्वी यजमान इन्द्रको जानता है ?

१९ अङ्ग शविष्ठ ! त्वं देवः मर्त्यं प्र शंसिषः । (हे) मघ-वन् इन्द्र ! त्वत् अन्यः मर्डिता न अस्ति । ते वचः ब्रवीमि ॥

१९ हे प्रिय बहुत बलवाले इन्द्र ! तू तेजस्वी है, अतः मनुष्यकी बात सुन । हे धनवाले इन्द्र ! तुझसे भिन्न हमारा सुखदाता दूसरा कोई नहीं है, इसलिये मैं तेरी स्तुति करता हूं ।

२० (हे) वसो ! ते राधांसि, ते ऊतयः अस्मान् कदा चन मा मा दभन् । (हे) मानुष ! विश्वा च वसूनि चर्षणि-भ्यः नः आ उप-मिमीहि ॥

२० हे सबके निवासक इन्द्र ! तेरे धन और तेरे रक्षा-साधन हमें कभी मत छोडें । हे मनुष्योंके हित करनेवाले इन्द्र ! तू सारे धन दुष्ट लोगोंसे छीन कर हमारे समीप कर ।

ॐ अथर्व. २०।४१।१-३

हमारी राष्ट्र-भाषा

(लेखक– श्री० पं० धर्मदेवजी विद्या-वाचस्पति, सं० 'सार्वदेशिक,' देहली)

राष्ट्रभाषाकी आवश्यकता

किसी भी राष्ट्रकी वास्तविक उन्नति और उसके समस्त निवासियोंमें सच्चा प्रेम, संगठन और एकता की भावनाको भरनेके लिये एक राष्ट्रभाषाका होना आवश्यक है, इस बातसे कोई बुद्धिमान् इन्कार नहीं कर सकता। जहां लोग एक-दूसरेकी बातको समझही नहीं सकते, वहां उनमें पारस्परिक प्रेम और सहयोगकी भावना उत्पन्न होना असम्भव है। आर्यावर्तके प्राचीन इतिहासके पढनेसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि प्राचीन कालमें संस्कृतभाषा ऐसी थी जिसको सब लोग समझते और जिसके अन्दर वे सब व्यवहार करते थे। वाल्मीकि रामायणमें उस संस्कृतभाषाकेही द्विजी और मानुषी ऐसे दो भेदोंका निर्देश पाया जाता है। समस्त भारत-वासियोंकी भाषा होनेके कारणही संस्कृतभाषाको भारतीके नामसे भी पुकारा जाता था। धीरे धीरे इस भाषामें कई विकार वा अपभ्रंश होते गये और वह प्राकृतके नामसे प्रचलित हो गई, जिसको अशिक्षित वा सामान्य शिक्षित नर-नारियां प्रयोगमें लातीं थीं। उसके फिर शौरसेनी, मागधी, पाली आदि अनेक भेद होते गये। भारतकी वर्तमान अवस्थाको ध्यानमें रखते हुए हमारी राष्ट्-भाषा कौनसी है जिसको पूर्णतया हमें अपनाना चाहिये और जिसका प्रसार समस्त राष्ट्रवासियोंको एक सूत्रमें पिरोनेके लिये करना चाहिये, यह अत्यन्त आवश्यक प्रश्न है जो देश-भक्तोंके सम्मुख उपस्थित है और जिसपर गम्भीरता-पूर्वक विचार करनेकी आवश्यकता है। धारासभा, राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस), अखिल भारतीय राष्ट्रीयसमिति तथा अन्य सभा-सम्मेलनोंके अवसरपर जहां भारतके प्रत्येक प्रान्तके निवासी एकत्रित होकर समस्त भारतकी राष्ट्रीय समस्याओं और उन्नतिविषयक प्रश्नोंपर विचार करने बैठते हैं, वह राष्ट्भाषाकी समस्या उग्र और नग्न रूपमें उपस्थित हो जाती है। इस बातको तो कोई देशभक्त एक क्षणके लिये भी माननेको उद्यत न होगा कि अंग्रेजी जैसी किसी विदेशी भाषाको हम भारतीय राष्ट्रभाषाके रूपमें मान लें और उसमें अपना समस्त कार्यकलाप करें। ऐसा मानना राष्ट्रीयताकी भावनापर कुठाराघात करना और दासमनोवृत्तिकी पराकाष्ठाका सूचक होगा। इसके अतिरिक्त यह जानने हुए कि भारतमें लगभग २०० वर्षोंसे अंग्रेजोंका राज्य होते हुए भी शिक्षितोंकी संख्या ही १० प्रतिशतक है और उसपर भी अंग्रेजी जाननेवालोंकी सर्वथा केवल ३ प्रतिशतक है, इस प्रकारका प्रस्तावही सर्वथा मूर्खतापूर्ण होगा। तो फिर भारतकी राष्ट्रभाषा कौनसी हो सकती है ? हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी इनमें से किसके दावेको पक्षपातरहित होकर स्वीकार किया जा सकता है? इस बातका गम्भीरतासे विचार करना और एक निर्णयपर पहुंच कर दृढतासे उसके प्रसारार्थ समस्त शक्ति को लगा देना राष्ट्रहितकी दृष्टिसे अत्यावश्यक है। पूर्व इसके कि हम हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानीके राष्ट्रभाषाविषयक दावोंकी परीक्षा करें यह जान लेना आवश्यक है कि राष्ट्र-भाषाकी कसौटियां क्या हैं? कौनसी भाषा राष्ट्र-भाषा कहला सकती है ?

राष्ट्रभाषाकी कसौटियां

(१) किसी देशकी राष्ट्रभाषा वही हो सकती है जिसका उद्गम उसी देशका हो अर्थात् जो विदेशसे लाकर उस देशपर न थोपी गई हो।

(२) राष्ट्रभाषाके रूपमें उसी भाषाको स्वीकार किया जा सकता है जिसको बोलने या समझनेवालोंकी संख्या उस देशमें अन्य भाषाभाषियोंकी अपेक्षा बहुत अधिक हो तथा इस कारण जिसे अन्य प्रान्तीय भाषाभाषी भी सुगमतासे सीख सकें।

(३) राष्ट्रभाषा उसीको माना जा सकता है जिसका उस राष्ट्रकी संस्कृति और प्राचीन साहित्यके साथ विशेष सम्बन्ध हो।

इन सब दृष्टियोंसे विचार करनेपर हिन्दी भाषाकोही (जिसे स्वनामधन्य सुधारक शिरोमणि महर्षि दयानन्दजी सरस्वतीने आर्यभाषाके नामसे पुकारा था) राष्ट्रभाषाके रूपमें मानना सबसे अधिक संगत प्रतीत होता है। हमें बडी प्रसन्नता होती यदि सब भाषाओंकी जननी संस्कृत-भाषाका आजकल भी वैसाही प्रचार होता जैसा प्राचीन-कालमें था जबकि साधारण जुलाहे भी—

काव्यं करोमि नहि चारुतरं करोमि,
यत्नात्करोमि यदि चारुतरं करोमि।
भूपालमौलिमणिमण्डितपादपीठ,
हे साहसाङ्क कवयामि वयामि यामि ॥

जैसी सुन्दर रचना संस्कृतमें कर सकते थे और जब लकडहारे भी भोज महाराज जैसे अद्भुत संस्कृत-प्रेमीके मुखसे 'भारो बाधति' इस प्रकारके संस्कृत-व्याकरणकी दृष्टिसे अशुद्ध प्रयोगको सुनकर बडी निर्भयतासे 'भारो न बाधते राजन्, यथा बाधति बाधते' जैसा उत्तर दे सकते थे; किन्तु दुर्भाग्यवश आज अवस्था सर्वथा परिवर्तित हो चुकी है और मध्यकालके श्री शंकराचार्य, श्री रामानुजाचार्य, श्री मध्वाचार्य, श्री निम्बार्काचार्य, श्री वल्लभाचार्य आदि आचार्यों और महर्षि दयानन्दजी जैसे महानुभावोंके संस्कृतभाषाके उद्धारार्थ विशेष प्रयत्न करनेपर भी ऐसी स्थिति नहीं कि संस्कृतभाषा राष्ट्रभाषाका स्थान ले सके। किन्तु यह बात निश्चित है कि कोई संस्कृतनिष्ठ भाषाही भारतमें राष्ट्रभाषाका स्थान ले सकती है, अन्य नहीं, क्योंकि भारतमें बोली जानेवाली सभी भाषाओंका संस्कृतसे घनिष्ठ सम्बन्ध है, उर्दू, अर्बी आदि भाषाओंसे नहीं। विषय अत्यावश्यक होनेके कारण हम इसके स्पष्टीकरणार्थ बंगाली, गुजराती, मराठी, पंजाबी, मारवाडी, कनडी, मलयालम्, तिलुगु, तामिल आदि भाषाओंके संस्कृतसे सम्बन्ध-द्योतक रचनाओंके उदाहरण देते हैं जिनसे इस विषयकी यथार्थताके किसीको अणुमात्र भी सन्देह नहीं रहेगा कि सब भारतीय भाषाओंका संस्कृतसे विशेष सम्बन्ध है और उसके शब्दोंकी जिसमें प्रधानता हो ऐसी भाषाही भारतमें राष्ट्रभाषा बन सकती है। सबसे प्रथम हम बंगाली भाषाके कुछ पद्य लेते हैं। स्व० श्री बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्यायके 'वन्दे मातरम्' नामक स्फूर्तिदायक सुन्दर गीतको कौन देशभक्त भारतीय नहीं जानता?

सुजलां सुफलां मलयजशीतलां, शस्यश्यामलां मातरम्। शुभ्र-ज्योत्स्ना-पुलकित-यामिनीं, फुल्लकुसुमितद्रुमदल-शोभिनीम्। सुहासिनीं सुमधुरभाषिणीं। सुखदां वरदां मातरम्। वन्दे मातरम् ॥

इत्यादि शुद्ध संस्कृतके शब्द इस सुन्दर राष्ट्रीय गीतमें भरे हुए हैं। इसी प्रकार स्व० कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर की गीताञ्जलिके निम्न गीतको देखिये—

आमार सकल अंगे तोमार परश
लग्न हये रहियाछे रजनी दिवस
प्राणेश्वर एइ कथा नित्य मने आनि
राखिब पवित्र करि मोर तनु खानि।
मने तुमि विराजिछ, हे परम ज्ञान
एइ कथा सदा स्मरि, मोर सर्व ध्यान।
सर्व चिन्ता हते आमि सर्व चेष्टा करि
सर्व मिथ्या राखि दिव दूरे परिहरि ॥

इसमें सकल, अंग, लग्न, कथा, नित्य, मन, पवित्र, तनु, परम ज्ञान, सर्व, ध्यान, चिन्ता, चेष्टा मिथ्या, दूर, रजनी, दिवस आदि संस्कृत तथा परश, विराजिछ, परिहरि आदि तत्सम शब्द हैं जिनका हिन्दीमें भी प्रयोग होता है। ऐसेही

बहे निरन्तर अनन्त आनन्द धारा
बाजे असीम नभ माझे अनादि रव
जागे अगण्य रवि चन्द्र तारा
एकैक अखण्ड ब्रह्माण्डराज्ये
परम एक सेइ राज राजेन्द्र राजे
विस्मित निमेषहत विश्वचरणे विन्नत
लक्ष शत भक्त चित वाक्य हारा ॥

इत्यादि बंगाली गीतोंको लिया जा सकता है, जिनको संस्कृत हिन्दी जाननेवाले बडी सुगमतासे समझ सकते हैं। बंगालके मुसल्मान भी बंगाली बोलते हैं उर्दू नहीं, यह सब जानते हैं। बंगालीमें कमसे कम ७५ प्रतिशतक संस्कृत शब्दोंका जो हिन्दी भाषामें भी प्रचलित हैं, प्रयोग होता है।

अब मराठीका संस्कृत, हिन्दीसे सम्बन्ध जाननेके लिये उदाहरणार्थ निम्न प्रकारके गीतोंको लीजिये—

पवित्र तें कुळ पावन तो देश,
जेथें हरिचे दास जन्म घेती।

कर्म-धर्म त्यांचे झाला नारायण,
त्याचेनि पावन तिन्ही लोक।
यातायाति धर्म नाहीं विष्णुदासा,
निर्णय हा ऐसा वेदशास्त्रीं।
तुका म्हणे तुम्हीं विचारावे ग्रन्थ,
तारिले पतित नेणो किती॥

इत्यादि श्री सन्त तुकारामजीके अभंगोंमें पवित्र, कुल, देश, जन्म, हरिदास, कर्म-धर्म, नारायण, पावन, लोक, निर्णय, यातायात, ग्रंथ, पतित आदि सैकड़ों संस्कृत, हिन्दी में पाये जानेवाले शब्द पाये जाते हैं, जिन्हें हिन्दी-भाषी बड़ी सुगमतासे समझ सकते हैं।

गुजरातीका संस्कृत, हिन्दीसे कितना निकट सम्बन्ध है यह जाननेके लिए निम्न प्रकारके गुजराती भजनोंको उदाहरणार्थ लीजिये जो सुप्रसिद्ध होनेके कारण घर-घरमें बोले जाते हैं।

वैष्णव जन तो तेने कहिए,
जे पीड पराई जाणे रे।
पर दुःखे उपकार करे तोये,
मन अभिमान न आने रे॥
समदृष्टिने तृष्णा त्यागी,
परस्त्री जेने मात रे।
जिह्वा थकी असत्य न बोले,
पर धन नव झाले हाथ रे॥
वण लोभीने कपटरहित छे,
काम क्रोध निवार्या छे।
भणे नर सैंयां तेनुं दरसन करता,
कुल एको तेर तार्या रे॥

इसमें वैष्णव, जन, पीड़ा, पर दुःख, उपकार, मन, अभिमान, समदृष्टि, तृष्णा, त्याग, परस्त्री, माता, जिह्वा, असत्य, धन, लोभी, कपटरहित, काम, क्रोध, कुल आदि शुद्ध संस्कृत और दरसन, पराई, निवार्या, हाथ आदि तद्भव शब्द हैं जिनका हिंदीमें भी साधारणतया प्रयोग होता है यह बतलाने की आवश्यकता नहीं॥

अब पंजाबमें प्रचलित गुरुमुखीका जिसमें सिक्खोंके मान्य धर्मग्रंथ हैं— संस्कृत हिंदीसे निकट सम्बन्ध जाननेके लिए सुखमनीके निम्न वाक्योंको लीजिये।

सिमरउ सिमर-सिमर सुख पावउ
कलि कलेस तन माहि मिटावउ॥
सिमरउ जासु विस्वंभर एकै
नाम जपत अगनत अनेकै॥ (सुखमनी पृ १)
ब्रह्मज्ञानी सदा निरलेप
जैसे, जल महि कमल अलेप।
ब्रह्मज्ञानी सदा निरदोख
जैसे सूर सरब कउ सोख॥
ब्रह्मज्ञानीका इहै गुनाउ
नानक जिउ पावकका सहज सुभाउ॥
(सुखमनी (हिंदी) पृ० ५६-५)

यहां सुख, जल, कमल, पावक, ज्ञानी, सहज आदि शुद्ध संस्कृतके और सिमर, तन, विस्वंभर (विश्वम्भर) निरलेप, निरदोख (निर्दोष), सुभाव (स्वभाव)आदि तत्सम शब्दोंकी भरमार है जिसे संस्कृत हिंदी जाननेवाले बड़ी आसानीसे समझ सकते हैं।

मारवाड़ीका संस्कृत-हिंदीके साथ सम्बन्ध 'अनुकम्पा-ढाल'के निम्न प्रकारके वचनोंसे जाना जा सकता है।

दया दया सबको कहै, ते दया धर्म छै ठीक।
दया ओलखने पालसी, त्यांने मुक्ति नजीक॥
दया तो पहलो व्रत छै, साधु श्रावकरो धर्म।
पाप रुकै जासूं आवता, नवा न लागै कर्म॥२॥
छः काय हणै हणावै नहीं, हणतां भलो न जाणै
ताय। मन बचन काया करी ए दया कही जिन
राय॥३॥ (अनुकम्पाढाल ७ म)

यहाँ भी दया, धर्म, मुक्ति, साधु, श्रावक, व्रत, पाप, मन, वचन आदि संस्कृत-हिंदीमें प्रचलित शब्दोंकी भरमार है। इसी प्रकारके उदाहरण पंजाबी, मुलतानी, सिन्धी, उड़िया आदि भाषाओंके संस्कृत-हिंदीसे सम्बन्ध द्योतक दिये जा सकते हैं, किन्तु विस्तारभयसे उन्हें देना अनावश्यक है। अब हम दक्षिण भारतकी भाषाओंको लेते हैं जिनके विषयमें प्रायः कहा जाता है कि इनका संस्कृतके साथ कोई सम्बन्ध नहीं। मेरा दक्षिण भारतमें लगभग २० वर्ष के निवासका अपना अनुभवसिद्ध विचार यह है कि ऐसी धारणा जो उत्तर भारतमें प्रायः प्रचलित है, सर्वथा अशुद्ध

है। सबसे पहिले मैं कर्णाटक भाषा (कन्नडी) को लेता हूँ जिसमें बोलने और लिखनेका मैंने विशेष रूपसे अभ्यास किया था। यह उद्धरण उत्तरादि मठके स्वामी श्री सत्यध्यान तीर्थकृत, अद्वैत मत विचार ' नामक पुस्तकसे है जो देवनागरी लिपिमें छपी है।

ई जगत्तिनल्लि सर्वदा सुखवे नमगागलि दुःखवु स्वल्पवादरू बेडेंदु सर्वरिन्दलू प्रार्थ्यमानवाद सुखवु जीवन स्वरूपवागिद्दरू अदर मेले प्रकृतिरूपवाद बन्ध (आवरण) इरुवदरिन्द अनुभवक्के बारदे जीवरु बन्दोन्दु जन्मदल्लि अनेक जन्मापादक कर्मगलन्नु माडुत्त-माडुत्त आकर्मगलिंद सम्पादित देहानुभवद-कालदल्लि (अद्वैत मत विचार पृ० १-२)

इस सन्दर्भमें अनेक शुद्ध संस्कृतके शब्द हैं जिनमेंसे सभीका हिंदी-भाषामें भी प्रयोग होता है, यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं। मेरा विचार है कि कर्णाटक भाषामें कमसे-कम ६५ प्रतिशतक संस्कृतके शब्दोंका प्रयोग पाया जाता है। आन्ध्र भाषा (तिलगू) और मलयालममें तो यह संस्कृत शब्दोंका प्रयोग इससे भी अधिक ७५ प्रतिशतकके लगभग है। रामायण-महाभारत, भागवत आदिके तिलगू और मलयालमके अनुवाद पढते और सुनते हुए ऐसे प्रतीत होता है कि हम संस्कृत ग्रंथोंको पढ या सुन रहे हों। उदाहरणार्थ एक आन्ध्र भाषा (तिलगू) का श्लोक सुनिये।

दानमु भोगमु नाशमु इनिकतो मुडुगतलू भुवि धनमुनकम्। दानमु भोगमु निरुगने दीननि धनमुनक गति तृतीयमे पोसगुन्॥

यहाँ दान, भोग, नाश, भुवि, धनम्, तृतीय, गति, आदि शुद्ध संस्कृतके शब्दोंका प्रयोग जो हिन्दी भाषामें भी सर्वत्र प्रचलित हैं सर्वथा स्पष्ट है। इसी प्रकार पानीके लिये नीरु संस्कृत नीरम्, भातके लिये अन्नमु, भोजनके लिये भोजनमु, जल्दीके लिये त्वरगा अथवा शीघ्रमुगा, साफके लिये स्वच्छमु, कपडेके लिये वस्त्रमु, पुस्तकके लिये पुस्तकमु, दीयेके लिये दीपमु, ग्रामके लिये ग्राममु आदि संस्कृत शब्दोंका तिलगूमें प्रयोग होता है।

आन्ध्र भाषाके संस्कृतके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध जाननेके लिए निम्न पद्य भी उद्धृत करनेयोग्य है।

सदा शिवं शिखाग्रमध्ये प्रणवमूल ज्योति।
हृदयपुण्डरीकममलं नित्य परं ज्योति॥
अंगुष्ठमात्र परम पुरुष दिव्य परं ज्योति।
शृङ्गमध्ये शुंशुमार नित्य परं ज्योति॥

तामिलको सर्वथा अनार्य भाषा समझा जाता है और इसका संस्कृतसे किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं माना जाता, किन्तु यह विचार भी सर्वथा अशुद्ध है। तामिलकी पुस्तकोंमें " श्री राम मिथुलिम। नगर चेडूं शिवधनुचै अतिशीघ्र वडैसु जनक-पुत्रि सीता देय्यै विवाहं चेदुकोण्डार। विवाहं मुदिन्दिदूं प्रजैकल दम्पतिकुलै अति संतोष तुडन अंगि हारं शैदनत् " इत्यादि वाक्य पाये जाते हैं जिनमें नगर, शिवधनुष्, अतिशीघ्रम्, विवाह, प्रजा, दम्पति, संतोष आदि संस्कृत शब्दोंका प्रयोग स्पष्ट है। इसी प्रकार ग्रामम्, पट्टणम् (पत्तनम् शहर), जलम्, दूरम्, पुस्तकम्, अदिहम् (अधिकम्), पशु, मात्रम् (केवल), आमाम् (आम्-हां) इत्यादि हजारों संस्कृतके शब्द पाये जाते हैं, जिनका अनुपात कमसे कम ५० प्रतिशतक होगा।

भारतीय प्रसिद्ध भाषाओंके इस सिंहावलोकनसे इस बात में जरा भी संदेह नहीं रहता कि संस्कृतनिष्ठ हिन्दीही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है। क्योंकि संस्कृतके शब्द सभी भारतीय भाषाओंमें बहुत बडी संख्यामें पाये जाते हैं जिन का हिन्दी भाषामें भी वैसाही प्रयोग होता है। सन् १९३१ के सरकारी आंकडोंके अनुसार भारतके ३५ करोड मनुष्योंमें से १२,०२,३९,००० मनुष्य हिन्दी बोलते और ११ करोड हिन्दीको समझनेवाले थे अर्थात् हिन्दी समझनेवालोंकी संख्या लगभग २३ करोड व ६७ प्रतिशतक थी। इस प्रकारका दावा भारतकी और किसी भाषाके विषयमें नहीं किया जा सकता। सन १९४१ के जो आंकडे प्राप्त हुए हैं उनके अनुसार भारतमें भिन्न भिन्न भाषाएं बोलनेवालोंकी संख्या निम्न प्रकार है-- '

हिन्दी	१३ करोड	९३ लाख
बंगला	४ करोड	९३ लाख
तेलगू	२ करोड	३६ लाख
मराठी और तामिल	२ करोड	८८ लाख

कन्नडी	१ करोड	३ लाख
उडिया	१ करोड	१ लाख
गुजराती		९३ लाख
अंग्रेजी		३ लाख

इस प्रकार भी संस्कृतनिष्ठ हिन्दीका राष्ट्रभाषा होनेका दावा सर्वथा पुष्ट होता है। श्री पं० जवाहरलालजीने " भाषाओंका प्रश्न " विषयक अपने लेखमें कहा है कि 'भारतके नगरोंमें उर्दू बोली जाती है और देहातोंमें हिन्दी। उर्दू केवल नगरोंकी भाषा है और हिन्दी नगर और गाँव दोनोंकी। '

यद्यपि यह उपर्युक्त कथन भी केवल उत्तर भारतके कुछ शहरोंपरही लागू होता है, अन्यत्र नहीं, पर इससे भी हिन्दी भाषाका राष्ट्रभाषाका दावा पुष्ट होता है। क्योंकि भारतमें १० हजार नगर और ७ लाख गाँव हैं। भारतकी चौथाई जनसंख्या नगरोंमें और तीन-चौथाई गांवोंमें रहती है। अब आप ही सोचिये कि भारतकी साधारण जनता अधिकतर कौनसी भाषा बोल या समझ सकती है।

जो लोग अरबी फारसी शब्दोंसे लदी उर्दूको राष्ट्रभाषा बनानेके पक्षपाती हैं (जिस दावेकी निस्सारता उपर्युक्त विवेचनसे सर्वथा स्पष्ट है, क्योंकि बंगाली, गुजराती, मराठी, पंजाबी, मारवाडी, गुरुमुखी आदि भाषाओंके अरबी, फारसी व उर्दूसे कोई सम्बंध नहीं, उनकी ओरसे कई बार यह कहा जाता है कि हिंदी राष्ट्रभाषा (कौमी जबान) इसलिये नहीं बन सकती क्योंकि वह सिर्फ हिंदुओंकी जबान है पर यह बात भी ऐतिहासिक तथा साहित्यिक दृष्टिसे विचार करनेपर सर्वथा अशुद्ध प्रमाणित होती है। वर्तमान संस्कृतनिष्ठ हिन्दीके निर्माण और विस्तारमें मुसलमान लेखकों और कवियोंका भी बहुत बडा भाग रहा है। प्रायः यह माना जाता है कि हिन्दी यह नाम भी मुसलमानोंकाही रक्खा हुआ है। मीर खुसरो ने हिन्दीका जो कोष बनाया था, उसमें संस्कृतके कठिन कठिन शब्द भी पाये जाते हैं। सय्यद इन्शा अल्लाखाँ जैसे कट्टर मुसल्मानने जिस तरहकी भाषाका प्रयोग किया, उसके निम्न नमूने ध्यानमें रखनेयोग्य हैं-

" सिर झुका कर नाक रगडता हूँ उस अपने बनाने वालेके सामने जिसने हम सबको बनाया और बातकी बात में वह कर दिखाया कि जिसका भेद किसीने न पाया। "

" इस सिर झुकानेके साथही दिनरात जपता हूँ उस अपने दाताके भेजे हुए प्यारेको जिसके लिये यों कहा है कि ' जो तू न होता तो मैं कुछ न बनाता। "

" किसी देशमें किसी राजाके घर एक बेटा था। उसे उसके मां बाप और सब घरके लोग कुंवर उदयभान कह कर पुकारते थे। सचमुच उसके जोबनकी जोतमें सूरजकी एक सोत आ मिली थी। उसका अच्छापन और भला लगना कुछ ऐसा न था जो किसीके लिखने और कहनेमें आ सके " (हिन्दवी छुट)

इसमें दिनरात, जपता, दाता, राजा, जोबन (यौवन) जोत (ज्योति), सोत (स्रोत) आदि संस्कृतके अथवा तद्भव शब्द बहुत बडी संख्यामें पाये जाते हैं, अरबी फारसीके शब्द नहीं।

रसखान नामक तुर्ककी (जो १५८३ से१६२८ सन् तक रहा) रचनामें हिन्दीके लालित्यको देखकर किसको आश्चर्य न होगा ? श्री कृष्णकी भक्तिमें मस्त होकर वे लिखते हैं-

पाहन हौं तो वही गिरि को,
जो धरयो कर छत्र पुरन्दर कारन।
जो खग हौं तो बसेरो करौं,
मिलि कालिन्दी कूल कदम्बकी डारन ॥
बैन वही उनको गुन गाइ,
औ कान वही उन बैन सों सानी।
हाथ वही उन गात सरैं,
अरु पाइ वही जु वही अनुजानी ॥
जान वही उन प्रानके संग,
औ मान वही जो करै मनमानी।
त्यों रसखानि वही रसखानि,
जु है रसखानि सो है रसखानी ॥

(भक्तिकुसुमाञ्जलि पं० लक्ष्मीधर शास्त्री एम. ए. कृत पृ० ३० में सउद्धृत)

इसमें गिरि, कर, छत्र, पुरन्दर, खग, कालिन्दी, कूल, कदम्ब, सङ्ग, मान ये शुद्ध संस्कृत और पाहन (पाषाण), धारन, गात, प्रान आदि तत्सम शब्दोंका प्रयोग दर्शनीय है।

इसी प्रकार सम्राट् अकबरके सेनापति अब्दुल रहीम खान (१५८३ से १६२८ सन् तक) की निम्न प्रकारकी रचनाएं हिन्दी भाषाके सौन्दर्यकी दृष्टिसे उल्लेखनीय हैं।

तरुवर फल नहिं खात हैं, सरवर पियहिं न पान।
कहि रहीम पर काज हित, सम्पति सुचहि सुजान॥
जिहि रहीम चित आपनो, कीन्हों चतुर चकोर।
निशिवासर लगे रहौ, कृष्णचन्द्र की ओर॥

यहां तरुवर, फल, सरवर, सम्पत्ति, चकोर, चित, निशिवासर आदि संस्कृत अथवा तद्भव शब्दोंकी कैसी सुन्दर छटा है। ऐसीही मुहम्मद जायसीकी रचनाओंमें है। कबीरजीका जन्मसे मुसलमान होना अत्यन्त सन्दिग्ध होनेके कारण उनकी सुन्दर रचनाओंका उल्लेख इस प्रसङ्ग जान बूझकर नहीं किया गया। इन उपर्युक्त तथा अन्य मुसलमान आदि अनेक उत्तम लेखकों और कवियों द्वारा हिन्दी भाषाके साहित्यको जो गौरव प्राप्त हुआ है, इसके लिये सबको उनके प्रति विशेष रूपसे कृतज्ञ होना चाहिये। इनकी ललित रचनाएँ 'हिन्दी सिर्फ हिंदुओंकी जबान है' ऐसा माननेवालोंका मुंहतोड जवाब हैं।

वर्तमान मुसलमान हिन्दी लेखकोंमें श्री जहूरबख्शका नाम उल्लेखनीय है जो अपनी मनोहर रचनाओंसे हिन्दी भाषाके साहित्यको चमका रहे हैं। उनकी लालित्यपूर्ण हिन्दी रचनाके कुछ नमूने हम ' आर्य-महिला-रत्न ' नामक कलकत्तासे प्रकाशित अत्युत्तम पुस्तकसे उद्धृत किये बिना नहीं रह सकते।

" भारतवर्षके आदर्शके विषयमें क्या कहा जाये ? जिधर दृष्टि डालिये क्या धार्मिकता, क्या परहित-कातरता, क्या वीरता और क्या देशभक्ति, सभीके एकसे एक बढकर आदर्श आपको मिलेंगे जिनकी उपमा संसारमें और कहीं नहीं मिलती। ये आदर्श केवल पुरुषोंमेंही नहीं, स्त्रियोंमें भी पाये जाते हैं। संसार जानता है कि भारतवर्षके समान पवित्र आचरणवाली सती, साध्वी स्त्रियाँ और किसी भी देशमें नहीं हुईं। भारतवर्षके लिये यह बडे गौरवका विषय है कि उसकी पुत्रियोंने समय समयपर अपने पति, देश और धर्मके लिये अपूर्व आत्मत्याग और कष्ट सहिष्णुताका परिचय दिया है। यहांकी स्त्रियां केवल पतिव्रता ही नहीं होतीं, वीर और देशभक्त भी होती हैं। महारानी दुर्गावती और लक्ष्मीबाईने अपनी देशभक्तिका कैसा प्रमाण दिया था, समरक्षेत्रमें कैसी वीरता प्रदर्शित की थी, यह कौन नहीं जानता? यहांकी देवियां देशके लिये कैसा आत्मबलिदान कर सकती हैं, यह भी शिक्षित समाजसे छिपा नहीं। " इत्यादि (आर्य-महिला-रत्न, पृ० ४७)

इस ललित और हृदयङ्गम हिन्दीकी सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता पं० जवाहरलाल नेहरूजीकी हिन्दीसे तुलना करें तो आकाश-पातालका अंतर दृष्टिगोचर होगा! श्री पं० जवाहरलालजी ' मेरी कहानी ' के नामसे श्री. हरिभाऊ उपाध्यायद्वारा अनूदित आत्मचरित्रकी भूमिकामें लिखते हैं ' मेरी कहानी क्या है ? इसमें पिछले कुछ बरसोंकी खास खास घटनाओंका संग्रह नहीं है, इसके लिखनेका यह मकसद था भी नहीं। यह तो समय समयपर मेरे अपने मनमें उठनेवाले खयालात और जजबातका और बाहरी वाकयातका उनपर किस तरह और क्या असर पडा उनका दिग्दर्शनमात्र है। इसमें मैंने अपने मानसिक विकासको-अपने खयालातके उतार-चढावको सही चित्रित करनेकी कोशिश की है। मैं इसमें कहांतक कामयाब हुआ, यह कहना मेरा काम नहीं। लेकिन खास बात यह नहीं है कि क्या गुजरा, बल्कि यह है कि वह मुझे कैसा लगा और उस का मुझपर क्या असर पडा। यही इस किताबकी अच्छाई और बुराई जाननेकी कसौटी है।' इस सन्दर्भमें यदि मान्य पण्डित जो खास खासकी जगह विशेष विशेष खयालात, जजबात और वाकयातकी जगह विचार, भावना और घटना तथा मकसदकी जगह उद्देश्य शब्दका प्रयोग करते तो उनकी रचनाका सौन्दर्य कम न होता, बल्कि अधिक ही हो जाता। किन्तु हिन्दुस्तानी नामक खिचडी भाषाके नामसे जो अधिकतर उर्दू फारसी अरबी शब्दोंके अपनानेकी प्रवृत्ति अनेक राष्ट्नेताओंमें चल पडी है, उसका स्पष्ट परिणाम ऐसे लेखोंमें दिखाई पड रहा है।

श्री पं० जवाहरलालजी हिन्दी भाषाके प्रामाणिक व उत्तम लेखक होनेका दावा भी नहीं करते और न उसपर उनका पूर्ण आधिपत्य है, किन्तु श्री हरिभाऊ उपाध्यायजी जैसे अत्यन्त प्रसिद्ध हिन्दी लेखक इस ' हिन्दुस्तानी ' के शौकमें जिस तरहकी विचित्र भाषाका प्रयोग कर रहे हैं उसका नमूना देखिये। आप अपनी भूमिकामें पुस्तकमें प्रयुक्त भाषाके विषयमें लिखते हैं-

'मैं सरल और बोलचालकी भाषा– जिसे पूज्य बापूजी-ने ' हिन्दी हिन्दुस्तानी ' नाम दिया है और जो असली राष्ट्र-भाषा कही जा सकती है-लिखनेका पक्षपाती हूँ। इस पुस्तकके जरिये मैं उसका एक नमूना पेश करना चाहता था। लेकिन अफसोस है कि प्रकाशनकी जल्दी और अपनी बीमारीकी वजहसे मैं शुरूसे आखीर तक उसे निबाह न सका।............इसलिये कृपालु पाठकोंसे मेरा अनुरोध है कि जो भूलें उनकी निगाहमें आवें उनपर मेरा ध्यान दिलानेकी मिहरबानी करें। ...... यह सारी किताब सिर्फ एकाध आखिरी बात और चन्द मामूली रद्दोबदलके अलावा जेलमेंही लिखी गई है। इसके लिखनेका खास मकसद यह था कि मैं किसी निश्चित काममें लग जाऊँ जो कि जेल जीवनकी तनहाईके पहाडसे दिन काटनेके लिये बहुत जरूरी होता है।'

' हिन्दुस्तानी ' के नामसे जो खिचडी भाषा बनाई जा रही है और उससे शुद्ध संस्कृतबहुल हिन्दीपर जो कुठाराघात किया जा रहा है, उसका नमूना कांग्रेस मन्त्रिमण्डल द्वारा बिहार, मद्रास तथा अन्य प्रान्तोंमें तैयार कराई गई हिन्दुस्तानी रीडरोंमें मिल सकता है। बिहारमें उस समय के शिक्षा सचिव डा० सय्यद महमूदके नामसे जो 'महमूद सीरीज ' की रीडरें छपवाई गईं, उनमें श्री रामचन्द्रजीका वृत्तान्त इन शब्दोंमें था–

' बहुत पुराने जमानेकी बात है कि अयोध्यामें दशरथ नामके एक राजा राज करते थे, उनके राजमें रैयत बडी खुशीके साथ अपनी जिन्दगी बिताती थी। बादशाह इतने अच्छे थे कि वे कभी किसीको किसी चीजकी तकलीफ न होने देते थे। सभी रियाया उनसे खुश थी। बादशाहके तीन रानियां थीं।

'.........बादशाहने उन्हें पढानेके लिये एक गुरु बहाल कर दिया। गुरुजी सभी लडकोंके पढानेके तरीकेसे पूरे वाकिफ थे। वे हर घडी इन्हें अच्छे रस्ते पर चलनेकी तालीम देते थे। कुछही दिनोंमें बादशाहके चारों बेटोंने सभी तालीम अच्छी तरह सीख ली।'

(श्री रामचन्द्रजी, पृ० २)

मद्रास सरकारकी ओरसे जो हिन्दुस्तानी रीडरें बालक-बालिकाओंको शिक्षा देनेके लिये तैयार कराई गई थीं, उन में पाठके स्थानपर सबक, पुस्तकके स्थानपर ' किताब ' अक्षरोंके स्थानपर हरूफ, अभ्यासके स्थानपर मशक और पाठशाला व विद्यालयके स्थानपर मदरसा आदि उर्दू फारसी शब्दोंकी भरमार देखकर मुझे बडा आश्चर्य और दुःख होता था! भाषाको सरल बनाया जाय, जो उर्दूके शब्द बोलचालकी भाषामें बहुत प्रयुक्त होने लगे हैं उन्हें अपना लिया जाय, बुद्धिके स्थानपर शेमुषी जैसे कठिन शब्दोंका प्रयोग न किया जाय, इससे तो हम सब सहमत हो सकते हैं। किन्तु इसका यह अर्थ कदापि न होना चाहिये कि येन केन प्रकारेण हिन्दू मुस्लिम एकता लानेके राजनैतिक उद्देश्य-से हिन्दीमेंसे संस्कृत भाषाके शब्दोंको चुन चुन कर निकाल दिया जाय और उनके स्थानपर अरबी फारसीके शब्दोंकी भरमार कर दी जाय। मुझे तो ' हिन्दुस्तानी' के नामसे हमारी भाषाको खराब करनेकी वर्तमान प्रवृत्ति जो अनेक राष्ट्रीय नेताओंके अन्दर पाई जाती है, बडी घातक प्रतीत होती है। इसके द्वारा अरबी फारसीके शब्दोंको हमारी भाषापर लादा जा रहा है और नाम मात्रके दो चार संस्कृत शब्दोंका प्रयोग करके वस्तुतः हिन्दीकी हत्या की जा रही है, जिसका परिणाम बडा भयंकर होगा!

हिन्दीमें संस्कृत या उसके तत्सम, तद्भव शब्दोंकी प्रधानता होती है और वह देवनागरी लिपिमें लिखी जाती है। इसके विपरीत उर्दूमें अरबी फारसीसे लिए शब्दोंकी प्रधानता होती है और वह फारसी लिपिमें लिखी जाती है सैयद इंशा अल्ला खांने उर्दूके उद्गमके बारेमें लिखा था कि ' शाहजहानाबादके शिष्ट लोगोंने एक मत होकर अन्य अनेक भाषाओंसे दिलचस्प शब्दोंको चुना और कुछ शब्दों तथा वाक्योंमें हेर फेर करके अन्य भाषाओंसे अलग एक नई भाषा बना ली और उसका नाम उर्दू रख दिया है।' इस प्रकार उर्दू विदेशियों वा विधर्मियों विशेषतः मुगल दरबारद्वारा घडी हुई भाषा है, जो राष्ट्रभाषा कहलानेके सर्वथा अयोग्य है। सर सय्यद अहमद खांने इसके विषयमें लिखा था कि ' जो यह जबान खास बादशाही बाजारोंमें मुरव्वज थी इस वास्ते उसको जबान उर्दू कहा करते थे और बादशाही अमीर उमरा इसीको बोला करते थे गोया कि हिंदुस्तानके मुसलमानोंकी यही जबान थी।'

(असारुस्सनादीद भाग ४ पृ० ९-१० सन् १८४७)

पर उर्दूके विषयमें यह दावा भी अशुद्ध है कि वह

७-८ करोड मुसलमानोंकी भाषा है। क्योंकि पंजाब और युक्त प्रान्तके१-१॥ करोड मुसलमानोंको छोडकर बंगाल गुजरात, महाराष्ट्र दाक्षिण भारत आदि सब प्रान्तोंके मुसलमान अपनी अपनी प्रान्तीय भाषाएंही बोलते हैं न कि उर्दू।

इस प्रसंगमें 'हिन्दुस्तानी' के लक्ष्य और स्वरूपपर भी कुछ विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है जिसे कांग्रेसके अनेक नेता राष्ट्रभाषा बनाना चाहते हैं। सब जानते हैं कि बिहार एक हिन्दी भाषा-भाषियोंकी अधिकतावाला प्रान्त है। श्री बलदेव सहायजी नामक एक सज्जनने २४ नवम्बर सन् १९३६ को पटना यूनिवर्सिटीके सीनेटमें देशी भाषाओंको शिक्षाका माध्यम बनानेपर जोर दिया और हिन्दुस्तानीकी व्याख्या भी कुछ ऐसी की गई जिससे बिहारको कुछ महत्त्व मिल गया। उसमें कहा गया कि—

'हिन्दुस्तानीसे इस दफामें वह जबान मुराद है जो बिहारके हिन्दू मुसलमान आम तौरपर बोलते हैं और जो नागरी या उर्दू रस्म खतमें लिखी जाती है।' ('उर्दू' जुलाई सन् १९३७ पृ० ६५६), पर इससे बिहारकी उर्दू कमेटीवालोंको सन्तोष न हुआ और उन्होंने सारे भारतके उर्दूप्रेमियोंको जुटाकर निश्चित कर दिया —

'हिन्दुस्तानीसे मुराद वह जबान है जो इस मुल्ककी हिन्दू मुसलमान कौमोंके मेलजोल और एक दूसरेकी तहजीबसे मुतासिर होनेसे बनी है, जिसे शुमाली हिन्दके बाशिन्दे आम तौरसे बोलते हैं और हिन्दुस्तानके दूसरे हिस्सोंके रहनेवाले समझते हैं, जो अरबी, फारसी और संस्कृतके नामानूस लफ्जोंसे खाली है और जो उर्दू, देवनागरी या किसी दूसरे रस्म खतमें लिखी जाती है।'
("उर्दू" पृ० ६६१)

२२ मार्च सन्॰१९३८को बिहारके उस समयके शिक्षामंत्री डा० सय्यद महमूदकी कृपासे पटना विश्वविद्यालयके सिंडिकेटके कमरेमें एक सभा डा० राजेन्द्रप्रसादजीके सभापतित्वमें हुई जिसमें हिन्दुस्तानीके विषयमें यह कहा गया कि–

" हिंदुस्तानी वह जबान है जो शुमाली हिन्दमें मामूली बोल चालमें और आपसके मेलमिलापके वक्त इस्तमाल की जाती है और जो हिन्दी और उर्दूकी मुश्तरक बुनियाद है।" ("उर्दू" अप्रैल सन् १९३८ पृ० ३५५)

बिहारकी उस हिन्दुस्तानी कमेटीने उसी समय एक हिंदुस्तानी लुगत (डिक्शनरी) का बीडा उठा लिया और उसका सम्पूर्ण भार अंजुमन तरक्की उर्दूके प्राणस्वरूप मौलाना अब्दुल हकको सौंप दिया। जिससे यह स्पष्ट है कि अब हिन्दुस्तानीके नामसे उर्दूकोही भारतीयोंपर लादनेका यत्न किया जा रहा है। इसमें यदि किसीको अब भी सन्देह हो तो उन्हें याद रखना चाहिये कि आल इण्डिया मुस्लिम एजुकेशनल कान्फ्रेंसमें जो जुलाई सन् १९३७ में अलीगढमें हुई थी, यह तजवीज पेशकी गई थी कि 'उर्दू' की जगह 'हिन्दुस्तानी' नाम चालू किया जाय। साथही उसमें कहा गया था कि " यह समझना भी दुरुस्त नहीं कि इस तजवीजके पेश करनेवालोंका यह मकसद है कि हम अपनी जबानमें कोई ऐसी तबदीली कर लें जिससे वह हिन्दी या हिन्दवीके करीब बन जाय। हाशा व कला इस किस्मकी कोई बात नहीं है बल्कि बयीनः उसी उर्दू, उसी जबान, उसी बोलचालको जो हम बोलते हैं हम हिन्दुस्तानी कहते हैं।"
(अलीगढ मैगजीन, जुलाई सन् १९३७)

यह सचमुच दुःखकी बात है कि महात्मा गांधीजी तथा अन्य अनेक हमारे राष्ट्रीय नेता इस हिन्दुस्तानीके चक्करमें बुरी तरह फंस गये हैं और इस प्रकार विशुद्ध हिन्दीकी उपेक्षा कर रहे हैं! महात्मा गान्धीजीका कथन कि प्रत्येक भारतीय हिन्दी उर्दू दोनों भाषाओं और देवनागरी, फारसी दोनों लिपियोंको सीखे, यह यद्यपि देखनेमें सर्वथा निर्दोष प्रतीत होता है तथापि अव्यवहार्य होनेके अतिरिक्त इस दृष्टिसे हानिकारक भी है कि इसके अनुसार बहुत सम्भवतः महात्माजीपर श्रद्धाके कारण हिन्दू तो उर्दू सीखना प्रारम्भ कर देंगे पर मुसल्मानोंमेंसे बहुतही कम हिन्दी सीखनेका यत्न करेंगे जिसका परिणाम यह होगा कि कुछ वर्षों बाद उर्दू जानने वा बोलनेवालोंकी संख्या बढ जाएगी और तब उसे राष्ट्रभाषा होनेका दावा डंकेकी चोटसे किया जायगा। प्रत्येक बालक–बालिकापर हिन्दी उर्दू दोनों भाषाओंका उसकी अपनी प्रान्तीय भाषा तथा अंग्रेजीके अतिरिक्त भार लादना भी सर्वथा अनुचित है। ऐसे प्रस्तावके आधारपर महात्मा गांधीजीका हिन्दी साहित्य सम्मेलनसे पृथक् होना यद्यपि खेदजनक है तथापि उनके ऐसे विचारोंके होते हुए वह अनिवार्य

हो गया था। 'हिंदुस्तानी तालीमी संघ' यह नामही जिस मनोवृत्तिका सूचक है हम उसका कभी अभिनन्दन नहीं कर सकते, चाहे महात्मा गान्धीजी जैसे मान्य महानुभावका वरद हस्त उसके ऊपर हो ! देवनागरी लिपि अत्यन्त वैज्ञानिक और पूर्ण लिपि है जिसका मुकाबिला फारसी या रोमन लिपि किसी अवस्थामें भी नहीं कर सकती।

हिंदी प्रेमियोंका कर्तव्य

अन्तमें समस्त हिन्दी प्रेमियोंका ध्यान मैं इस आवश्यक विषयकी ओर आकर्षित करते हुए उनसे अनुरोध करता हूँ कि वे राष्ट्रभाषा संस्कृतनिष्ठ हिन्दीको विशेष रूपसे अपनाएँ जैसे कि महर्षि दयानन्दने आदेश दिया था और उस दिनको लानेका पूर्ण प्रयत्न करें जिसके लिये स्वनामधन्य महर्षिने कहा था कि 'मेरे नेत्र उस दिनको देखनेके लिये आतुर हैं जब कश्मीरसे कन्याकुमारीतक सब देशवासी एकही भाषाको बोलने वा समझनेवाले होंगे।'

राष्ट्रभाषा हिन्दीके क्रियात्मक प्रचारकोंमें महर्षि दयानन्दजीका नाम स्वर्णाक्षरोंमें लिखनेयोग्य है, जिन्होंने न केवल गुजराती मातृभाषा होते हुए भी अपने 'सत्यार्थ-प्रकाश' आदि अमर ग्रन्थ हिन्दी भाषामें लिखे बल्कि रियासतोंमें हिन्दीको अदालती भाषा बनवानेके अतिरिक्त इस बातका अपने अनुयायियों द्वारा पूर्ण प्रयत्न 'मेमोरियल' आदि भिजवा कर किया कि हिन्दीही राष्ट्रभाषाके रूपमें शिक्षाका माध्यम बने। धर्मवीर स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराजने गुरुकुल विश्वविद्यालय कांगडीमें हिन्दी भाषाको विज्ञान, गणित, इतिहास, दर्शनशास्त्र, अर्थशास्त्र इत्यादि सब विषयोंकी उच्च शिक्षाका माध्यम बनाकर महर्षिकी उसी शुभ इच्छाकी पूर्तिका अत्यन्त प्रशंसनीय और अनुकरणीय कार्य किया।

अतः सभी आर्यों और आर्य कुमार-कुमारियोंका यह आवश्यक कर्तव्य है कि वे इस राष्ट्रभाषा हिन्दीके प्रचारमें पूर्ण क्रियात्मक सहयोग दें। स्वयं हिन्दीका अच्छा अभ्यास करके वे वर्षमें कमसे कम १० व्यक्तियोंको हिन्दी सिखानेका दृढ व्रत लें और यथासम्भव हिन्दी कक्षाओं, रात्रि पाठशालाओं, पुस्तकालयों और वाचनालयोंकी स्थापनाद्वारा इस अपने व्रतकी पूर्ति करके पुण्यके भागी बनें। केन्द्रीय हिन्दीरक्षा समिति (श्रद्धानन्द बाजार), देहली, राष्ट्रभाषा हिन्दीके अधिकारोंकी रक्षार्थ डाक विभागके अधिकारियोंसे जो निरन्तर पत्र-व्यवहारादि कर रही है तथा मासिक विज्ञप्ति पत्रों द्वारा (जिसका वार्षिक शुल्क केवल १-रु० है) जनताका ध्यान निरन्तर अपने इस विषयक कर्तव्यकी ओर आकर्षित कर रही है, ऐसी संस्थाओंको पूर्ण क्रियात्मक सहयोग देना और राष्ट्रभाषा हिन्दीमें अपना समस्त क्रियाकलाप करनेके प्रतिज्ञा-पत्र भरवाना आर्य कुमारों तथा अन्य सब राष्ट्रभाषा-प्रेमियोंको अपना परम कर्तव्य समझना चाहिये।

हिंदू क्या करें ?

१. पूर्व–बंगालका भीषण अत्याचार

मुस्लिम लीगके 'डाइरेक्ट ऐक्शन' के दिन होनेवाले पूर्व-नियोजित कलकत्तेके भयानक नरसंहार और पैशाचिक अत्याचार, मुसल्मान नेताओंकी दूषित मनोवृत्ति और पूर्व-बंगालके ढाका आदि स्थानोंमें होनेवाले अनाचारोंको कुछ लोग पढ-सुन चुके हैं। तबसे कलकत्ता, ढाका, चटगाँव आदि थानोंमें छूरे भोंके जाने, एसिड फेंककर जलाये जाने आदिकी कुक्रियाएँ लगातार चल रही हैं! पूर्व-बंगालमें जिस अत्याचारका आरम्भ हुआ था वह इधर बहुत बढ गया। और गत १० अक्टूबरसे अबतक नोआखाली, कुमिल्ला और त्रिपुरा जिलेमें लगभग १६०० वर्गमील भूमिके सैकडों गाँव इस भयानक अत्याचारके शिकार हो चुके हैं। कहते हैं कि लगभग चार लाख नर-नारियोंपर इसका प्रभाव पडा है। इस छोरसे उस छोरतक गाँव-के-गाँव जला दिये गये हैं; हजारोंकी संख्यामें नर-नारी, आबाल-वृद्धोंकी निर्मम हत्याएँ की जा चुकी हैं, उनके घरोंका सारा माल-असबाब लूटा जा चुका है; असंख्य स्त्रियोंका अपहरण और सतीत्व नष्ट किया गया है; अगणित बालिकाओंसे बलपूर्वक विवाह कर लिया गया है; धर्मस्थल और देव-मन्दिर नष्ट-भ्रष्ट किये जा चुके हैं, जीवित पुरुषोंको बाँध-बाँधकर जला दिया गया है; और हजारों नर-नारी जबर्दस्ती मुसल्मान बना लिये गये हैं। आचार्य कृपलानीजीके साथ जानेवाले पत्रकार श्रीपुरुषोत्तमदास टंडनके सामने एक शरणार्थीने कराहते हुए बतलाया कि 'आततायियोंने भाइयोंके सामने बहिनों-पर और पुत्रोंके सामने माताओंपर बलात्कार किये! फिर जबर्दस्ती पकड पकडकर उनसे एक दूसरेके मुँहमें पेशाब करवाया गया! उन्हें जमीनपर डाल दिया गया, उत्सव मनाकर छूरे भोंके गये, उनके खूनसे आततायियोंने अपने हाथ रँगे और उसी खूनसे महिलाओंके मुँहको रँगकर उनपर पुनः बलात्कार किया !!

इस प्रकारका पैशाचिक काण्ड अबतक ज्यों-का-त्यों चल रहा है। सहयोगी 'भारत' लिखता है कि—'स्टेट्समैन' पत्रके नोआखालीस्थित संवाददाताने लिखा है कि 'गुंडा-शाही प्रारम्भ होनेके १३ वें दिन भी नोआखाली जिलेके १२० गाँव, त्रिपुरा जिलेके ७० गाँव सशस्त्र मुस्लिम गुंडों-द्वारा घिरे हुए हैं। इस घेरेमें फँसे हुए १ लाखसे अधिक हिंदू स्त्रीपुरुषोंके प्राण खतरेमें हैं। उक्त संवाददाताने यह भी बताया है की आपत्तिमें फँसे हुए अधिकांश लोगोंको कई दिनोंसे भोजन नहीं मिला है और अगर फौज रसदकी सहायताके साथ शीघ्र घेरेको तोडकर उनके पास नहीं पहुँच जाती तो वे जीवित बच नहीं सकते! उपद्रवकारी लोग कसाइयोंकी तरह हिंदुओंको मारकर या तो जला देते हैं या नहरमें फेंक देते हैं ताकि उनका पता न लगे और किसी तरह शिनाख्त न की जा सके।'

२. अत्याचार पूर्वनियोजित

यह सारा अत्याचार ऐसी सुसंघटित और व्यवस्थित रीतिसे हो रहा है कि जिससे यह स्पष्ट सिद्ध हो जाता है कि यह आकस्मिक उत्तेजनाका कार्य नहीं है, परन्तु किसी पूर्व-निश्चित योजनाके अनुसार ही सब कुछ किया जा रहा है। कांग्रेसके अध्यक्ष आचार्य कृपलानीजीने कहा है कि हमको शरणार्थियोंने यह बताया है कि 'हमले अत्यन्त संगठित रीति-से किये गये थे। गुंडोंमें अवसरप्राप्त सरकारी कर्मचारी भी थे। उन लोगोंने सैनिक ढंगसे आक्रमण किया। गुंडे पहले अपने कुछ साथियोंको गाँवोंमें भेजते थे जो उन्हें आवश्यक सूचनाएँ देते थे। वे लोग सडकें काटनेमें और पुल तोडने आदिमें भी निपुण थे। उपद्रवके पूर्व ही एक भूतपूर्व एम्० एल० ए० भी मुसल्मानोंको भडकानेके लिये बाकायदा प्रचार करते थे। हमें विश्वास है कि सरकारको उस आदमीकी हरकतोंका पता था। ××××'

नोआखालीकी यह तैयारी बहुत पहलेसे चल रही थी। इब्राहीमपुरके श्री सुधीर घोषने फ्री प्रेसके संवाददाताको बताया है कि 'छबे-चौबे आदमी गुंडोंका नेतृत्व कर रहे हैं। कलकत्ता हत्याकाण्डके बाद अर्थात् २० अगस्तसे ही छूरोंके बडे-बडे पारसल तथा पेट्रोल नोआखाली भेजा जा रहा था और अब इसका खुलकर उपयोग किया जा रहा है।'

एक शरणार्थीने बतलाया है कि 'कुछ गुंडे लोहेके टोप

पहने थे और वे राइफलों, बंदूकों तथा पिस्तौलोंसे लैस थे।' इन सब बातोंसे पहलेकी तैयारीका स्पष्ट पता लगता है।

अत्याचारपीडित हजारों नरनारी भागकर शहरोंमें चले गये हैं। एक तरहसे वह इलाका हिंदुओंसे शून्य कर दिया गया है। पुरुष मार डाले गये, स्त्रियाँ हर ली गयीं, घर जला दिये गये, पशुओंकी हत्या कर दी गयी, माल-असबाब लूट लिया गया और बचे-खुचे जो लोग किसी तरह प्राण बचाकर भाग सके वे भागकर अन्यत्र चले गये। सारांश यह कि उन स्थानोंमें अब शायद ही कोई हिंदू रहा होगा। कुछ समय पहले मुस्लिम लीगी नेताओंने जो महमूद गजनी, नादिरशाह और चंगेज खाँकी तरह हिंदुओंको तबाह कर-नेकी धमकी दी थी और जिसे हिंदुओंने उस समय उनका प्रलाप समझा था, वे सच्ची कर दिखायीं। उनकी राक्षसी साधना और व्यवस्था इस दिशामें बढ़ाईही करनी पड़ती है। 'जहर वही सबसे बढ़िया है, जो जल्दी-से-जल्दी आदमी को मार सके।'

३ अंग्रेज-मुसलमान गठबन्धन

आजके इस सभ्य जगत्में सुसभ्य अंग्रेजोंकी देख-रेखमें और निर्भीक तथा न्यायप्रिय कांग्रेसके केन्द्रीय राज्यकालमें इस प्रकारकी भीषण नादिरशाहीका होना यद्यपि बडे दुःख और लज्जाकी बात है; परन्तु बलवान् सब कुछ कर सकता है! आज मुसलमान संघटित होनेसे बलवान् हैं, हिंदुओंने राष्ट्रीयताके मोहमें हिंदुत्वकी रक्षा करनेमें उपेक्षा की और अंग्रेज स्वार्थसाधनके लिये मुसलमानोंसे मिल गये। ऐसी स्थिति में जो कुछ हो जाय, वही थोडा है। इस बातका पुष्ट प्रमाण तो अभी आँखोंके सामने है। पूर्व-बंगालमें हजारों नर-नारियोंकी निर्मम हत्याएँ हुई तथा हो रही हैं। इतना अधिक नारी-निर्यातन और बलात्कारसे धर्म-परिवर्तन किया गया और किया जा रहा है, इसपर भी बंगालके गवर्नर सर फ्रेडरिक बरोज महोदय विलायतके हाउस ऑव कामन्समें सूचना भेजते हैं कि 'यह आम मुसलमानोंकी हिंदुओंके विरुद्ध चढाई नहीं थी (There has been no general rising of Muslims against Hindus), आपके खयाल-शरीफमें पूर्व-बंगालके दंगेमें मृत्यु-संख्या तीन अक्षरों में यानी कुछ सैकडोंमेंही परिमित है (in the three figures category) और नारी-अपहरण तथा बलपूर्वक धर्मपरिवर्तनके सम्बन्धमें तो आप फरमाते हैं कि ऐसे अपराधोंकी सूचना मिली तो है, परन्तु सीधा सबूत ऐसी शिकायतोंके सम्बन्धमें नहीं आया है-' (no direct evidence had been received with regard to either allegations.)

श्री शरच्चन्द्र बसुने इसका विरोध करते हुए कहा है कि गवर्नर महोदयके इस वक्तव्यके द्वारा स्थितिको हलका करनेका प्रयत्न किया गया है। परन्तु बात ऐसी नहीं है। नोआखाली और त्रिपुरामें आम मुसलमानोंनेही हिंदुओंपर चढाई की थी। गवर्नर महोदयने जो मृत व्यक्तियोंकी संख्या कुछ सौ बतायी है, इसका भी श्री बसु महाशयने खण्डन किया है। वे कहते हैं 'स्टेटस्मैन एवं अन्य पत्रोंने जो कुछ लिखा है, उनसे प्रकट है कि मृतकोंकी संख्या निश्चयही हजारोंमें होगी। एकही स्थानपर श्री सुरेन्द्रकुमार बसुके घरपर एकही दिनमें ४०० व्यक्तियोंके मारे जानेकी बात तो समाचारपत्रोंमें भी आ गयी है। × × × × सब उपद्रव सुसंगठित जत्थोंद्वारा हो रहा था। उनमें सेनासे छूटे हुए लोग भी शामिल थे और इनका नेतृत्व एक भूत पूर्व एम्० एल० ए० महोदय कर रहे थे।'

'अमृतबाजार पत्रिका' ने ठीक ही लिखा है कि 'बंगालका गत दुर्भिक्ष उस समयके गवर्नर मिस्टर हर्बर्ट और सुहरवर्दीके सहयोगका फल था, तो आजका यह पूर्व-बंगालका गुंडाराज बरोज और सुहरवर्दीकी सम्मिलित और सहयोगितापूर्ण चेष्टाओंका परिणाम है!' चर्चिल साहबका मियाँ जिन्नाके साथ जैसा स्नेह सम्बन्ध है, उसका सबको पता है ही! इधर वायसराय महोदय भी अपने मुसलमान भक्तोंका पूरा साथ दे रहे हैं। इसीसे उन्होंने कलकत्तेके 'नरसंहार' के एक सप्ताह बाद ता० २४ अगस्तके वक्तव्यमें यह कहा है कि—'प्रान्तीय शासन स्वाधीनताके क्षेत्रमें निःसन्देह ही मेरी केन्द्रीय सरकारको हस्तक्षेप करनेका कोई अधिकार नहीं होगा और यथार्थमें उसकी ऐसी कोई इच्छा भी न होगी कि वह प्रान्तीय शासनप्रणालीके बाबत कोई बात उठावे।'

(In the field of provincial Autonmoy of

course, my new Government will not have any power, or indeed any desire to intervene in the field of Provincial administration.)

यह कानून सन् १९३५ में बना था और १९३७ से लागू हो गया था। वही अब भी है, कोई नयी बात नहीं है। इस बीचमें कई बार केन्द्रीय सरकारने प्रान्तीय सरकारोंको सूचनाएँ दी हैं और प्रान्तीय सरकारोंने उनका पालन किया है। यह कोई चाहता भी नहीं कि साधारण स्थितिमें केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय सरकारके शासनमें हस्तक्षेप करे; परन्तु कलकत्तेके भीषण नरसंहार-जैसी असाधारण स्थितिमें वायसराय महोदयका यह ब्रॉडकास्ट करना क्या अर्थ रखता है इसका प्रत्येक बुद्धिमान् पुरुष अनुमान लगा सकता है। यदि कोई इसका यह अर्थ लगावे और ऐसा अर्थ लगाना युक्तिसंगत भी है कि 'भारतकी प्रान्तीय (लीगी) सरकार जो चाहे सो करे। केन्द्रीय सरकारको उसे रोकनेका न तो कोई अधिकार है और न वह रोकेगी ही।' हमारे नीतिकुशल अंग्रेजोंका और अधिकारलोलुप नेतृपदपर आसीन मुसल्मान भाइयोंका यह गठबन्धन भी वर्तमान दुर्दैवका एक-एक मुख्य हेतु है! इसीसे आज सुहरवर्दी और उनकी सरकार ताल ठोंककर मानो हिंदुओंको ललकार रही है और मुसल्मानोंको मनमानी करनेके लिये प्रोत्साहन दे रही है!

४. कलकत्ताकाण्डका जाँच-कमीशन

इसीसे कलकत्तेके नरसंहारकी जाँच भी केन्द्रीय सरकार-द्वारा नहीं बैठायी जाकर उस बंगाल-सरकारके द्वारा ही बैठायी गयी है, जो स्वयं अपराधी है। और उस कमीशनका तमाशा अभी कलकत्तेमें चल रहा है। इसपर 'आनन्दबाजार पत्रिका' ने बहुत ठीक लिखा है कि 'मुस्लिम-लीग-दलने अपनी तेजधार तलवारसे खूनके अक्षरोंमें जिस इतिहासकी रचना गत १६ अगस्तको प्रारम्भ की थी, वह यदि समाप्त हो चुकी होती तो समालोचना और विचार-विश्लेषणके योग्य समझी जाती और तभी उसके सम्बन्धमें विचार करके किसी सिद्धान्तपर पहुँचना भी सम्भव होता। परन्तु पूर्व-बंगालकी साम्प्रतिक घटनाएँ उच्चकण्ठसे यह घोषणा कर रही हैं कि कलकत्तेका अग्नि-उत्सव अभी निर्वापित नहीं हुआ है, कलकत्तेकी हलाकोंका अभी रुकी नहीं है! कलकत्तेके अग्निकुण्डमें जो मशाल जलायी गयी थी, दुष्टोंका दल उसी मशालको लेकर चल पड़ा है पूर्व-बंगालके एक जिलेसे दूसरे जिलेमें और एक गाँवसे दूसरे गाँवमें! और उसीके स्पर्शसे आज सारा पूर्व-बंगाल प्रज्वलित हो उठा है। कलकत्तेमें जिस छुरीपर धार चढायी गयी थी, जेहादी जल्लाद आज उसी छुरीसे पूर्व-बंगालके शान्तिपूर्ण निवासियोंके हृदय विदीर्ण कर रहे हैं……। जांच-कमीशनसे हम पूछना चाहते हैं कि उपद्रवकी लगातार बहती हुई घटना-तरङ्ग-धाराके किसी एक स्थानमें पूर्ण विरामका चिह्न लगा देना क्या विवेकपूर्ण कार्य है? बंगालकी छातीपर अपराधोंकी जो तरङ्गधारा अविराम गतिसे बह रही है, कलकत्तेका नर-संहार उसीका एक अन्यतम अङ्ग है। इन दौड़ती हुई घटना-तरङ्गोंके बीचसे जांच-कमीशन कलकत्तेकी तरङ्गको किस मन्त्रबलसे शान्त और अचल कर देगा? पीडित पूर्व-बंगालके एक सम्प्रदाय विशेष- (हिंदुओं) की आर्त पुकार जब जांच-कमीशनके विचारागारमें प्रतिकारकी प्रार्थनाके साथ पछाड खाकर पड जायगी, तब कलकत्तेके उपद्रवके विचारका यह सारा प्रयास क्या एक प्रहसनमें परिणत नहीं हो जायगा? यह अस्वाभाविक आबहवा और यह अशान्त वातावरण जांच-कमीशनके लिये सचमुच ही सर्वथा विपरीत है।'

इतना होनेपर भी जाँच हो ही रही है। यह भी लीग सरकारका एक तमाशा ही है।

५. दूषित मनोवृत्ति और प्रतिहिंसाकी आशङ्का

उधर पूर्व बंगालके भयानक अत्याचारोंकी घटना आँखों देखकर लौटे हुए काँग्रेसके अध्यक्ष आचार्य कृपलानी बड़ा रोमाञ्चकारी वर्णन करते हैं और उन्हींके साथ उसी वायुयानमें लौटकर आये हुए सुहरवर्दी उसे बहुत मामूली-सी बात बताकर टाल देते हैं। वे और उनकी लीग कहती है कि नोआखालीमें कुछ हुआ ही नहीं। सम्भव है आगे चलकर वे इसे केवल हिंदुओंका प्रोपगंडा बनाकर सबकी आँखोंमें धूल झोंकना चाहें! पर इससे उनकी मनोवृत्तिका स्पष्ट पता लग जाता है। असलमें तो इसे हिंदु-मुसल्मानका दंगा कहना ही असत्य है। दंगा तो तब हो जब आपसमें लडाई हो। यह तो अल्पसंख्याक हिंदु-सम्प्रदायपर बहुसंख्याक अत्याचारी मुसल्मानोंका उनकी सरकारकी प्रत्यक्ष

या अप्रत्यक्ष सहायतासे किया जानेवाला क्रूर अत्याचार है। भगवान् न करें, कहीं उन बहुसंख्याक हिंदु-प्रान्तोंमें—जहाँ मुसल्मानोंकी बहुत अल्प संख्या है,—बंगालकी सहधर्मी हिंदु मा-बहनोंके ऊपर किये जानेवाले अत्याचारके प्रतिशोध-की भावना जाग उठे और वे भी वैसा ही बदला लेनेको तैयार हो जायँ, तो निश्चित है कि जो लीगी आज राक्षसी अत्याचार करके विजयोन्मत्तकी भाँति छाती फुला रहे हैं, उन्हें लेनेके देने पड जायँ। बम्बई-प्रान्तीय मुस्लिम मजलिसके प्रधान मन्त्री श्रीआदम अदीलने नोआखालीकी दिल दहला देनेवाली घटनाओंकी, उनपर मियाँ जिन्ना और अन्य मुस्लिम लीगी नेताओंकी चुप्पीकी निन्दा करते हुए यही कहा है कि—'क्या मुस्लिम लीगी नेता नोआखाली और बंगालके दूसरे भागोंमें होनेवाली घटनाओंको पाकिस्तानकी प्राप्तिका साधन समझते हैं ? यदि यही बात है तो क्या वे यह महसूस करते हैं कि हिंदू-बहुसंख्यक प्रान्तोंमें रहनेवाले उन अति अल्पसंख्याक मुसल्मानोंका क्या होगा, यदि हिंदुओंने बदला लेना शुरू कर दिया।' बात सत्य है। बंगालकी इन भीषण अत्याचारकी घटनाओंने हिंदुओंका हृदय हिला दिया है। ऐसा कौन हिंदु होगा जिसके प्राण इन राक्षसी अत्याचारोंके समाचारोंको पढ-सुनकर व्याकुल न हो उठे हों और जिसके हृदयका खून न खौल उठा हो ! परन्तु हिंदुहृदय सदासे ही दयालु है। वह कभी इस प्रकारके नृशंस अत्याचारके लिये प्रस्तुत नहीं हो सकता और असलमें होना भी नहीं चाहिये। स्त्री-बच्चे किसी भी जातिके हों, सर्वथा अवध्य तथा सम्मान और स्नेहके पात्र हैं ! शरणार्थी कोई हो, उसकी भी रक्षा करनी ही चाहिये। और नारी-अपहरण, शिशु-हत्या, बलपूर्वक धर्म परिवर्तन, सतीत्वनाश और मनुष्योंके जीवित जलानेकी तो कल्पना ही पापमयी है ! हिंदुओंको सदा इससे बचना चाहिये। परन्तु जिस प्रकारके अत्याचार हो रहे हैं और जिनके रोकनेका अत्यावश्यक कार्य प्रान्तीय और केन्द्रीय सरकारद्वारा तुरंत नहीं हो रहा है, उसे देखते यह आशङ्का तो होती ही है कि कहीं यह आग प्रतिहिंसाके रूपमें अन्य प्रान्तोंमें न भडक उठे !

६. प्रांतीय और राष्ट्रीय सरकारकी अकर्मण्यता

प्रान्तीय सरकार चाहती तो इस नरसंहार और अत्याचारको अवश्य रोक सकती थी। स्वयं महात्मा गाँधीजीने कहा है कि 'लीग सरकार चाहे तो दंगा रुक सकता है।' गाँधीजीके दूत श्रीसुधीर घोषने कहा है कि 'बंगालके गवर्नर यदि साहस करके प्रधान मन्त्री (सुरहवर्दी) से कह दें कि 'दंगा बंद कराओ या पद-त्याग कर दो' तो पूर्व-बंगालका उपद्रव आज रुक जाय। श्रीसुधीर घोषने और भी कहा है कि 'यह काम तो वास्तवमें राष्ट्रीय सरकारका है, गवर्नर जनरल (वायसराय) पर यह विशेष जिम्मेदारी है कि किसी प्रान्तमें ऐसी अराजकता न होने दें। इसके लिये उन्हें विशेषाधिकार मिले हैं। इस विशेषाधिकारका उपयोग अब उनका मन्त्रिमण्डल ही कर सकता है। प्रधान मन्त्री (श्रीनेहरूजी) को चाहिये कि वायसरायको बंगालके मामलेमें हस्तक्षेप करनेकी सलाह दें। और वायसराय इस सलाहको स्वीकार करनेके लिये बाध्य हैं।' पर गवर्नर या वायसराय क्यों ऐसा करने लगे ? एंग्लो-मुस्लिम-गठबन्धनमें ही जो उनका स्वार्थ है !

प्रसिद्ध राष्ट्रीय पत्र 'प्रताप' ने २२ अक्टूबरके सम्पादकीय लेखमें लिखा है— 'बादकी खबरोंसे ज्ञात हुआ है कि नोआखली और त्रिपुरा जिलेके कुछ स्थानोंमें १० अक्टूबरसे अबतक ५००० व्यक्ति मारे जा चुके हैं। ५०००० हिंदुओंको जबर्दस्ती मुसल्मान बनाया गया है। इस नरमेध-के सामने तो कलकत्ता-काण्ड कुछ भी नहीं है। बंगालमें दंगे तथा इस प्रकारकी खबरोंपर सख्त सेंसर यानी रुकावट लगी हुई है। इस सम्बन्धमें वहाँके समाचार-पत्रोंकी स्वतन्त्रताका वहाँकी लीगी सरकारने गला घोंट दिया है। वहाँके समाचारोंपर सख्त सेंसर लगा रहनेके बाद वहाँसे सम्बन्धमें इतनी खबरें हमें प्राप्त हो सकी हैं। वहाँकी वास्तविक परिस्थिति क्या होगी—इसका अनुमान नहीं किया जा सकता। ऐसा प्रतीत होता है कि वहाँकी मुस्लिम गुंडाशाही वहाँके तमाम हिंदुओंको नष्ट कर देनेपर उतारू और आमादा है। आश्चर्य है कि इतने दिनोंसे वहाँ यह आततायीपन हो रहा है, पर बंगालकी सरकार उसे अबतक रोक नहीं सकी है। (रोकती कैसे, उसके तो कर्णधार वेही हैं जो स्वयं इस नरमेधके कर्णधार हैं।) हमारा यकीन है कि जबतक बंगालमें मौजूदा सरकार कायम है तबतक बंगालसे मुस्लिम गुंडेशाही रुक नहीं सकती। इस मौजूदा सरकारकी पक्षपातपूर्ण नीति और अयोग्यतासे वहाँकी

मुस्लिम गुंडाशाहीको शह मिल रही है। इस सरकारमें सारे बंगालके हिंदुओंका जीवन खतरेमें पड गया है। कोई भी सभ्य और न्यायशील सरकार एक क्षणके लिये भी ऐसी नृशंस और पाशविक दुर्घटनाओंको सहन नहीं कर सकती। पर हम देखते हैं कि कलकता-काण्डके बाद बंगालमें एक-से-एक भीषण दुर्घटनाएँ होती चली जा रही हैं, लेकिन बंगालकी मौजूदा सरकार उन्हें रोकनेमें कतई अयोग्य और असमर्थ है। हम चाहते हैं कि जितना शीघ्र उसके स्थान-पर कोई दूसरी क्षमतावान् सरकार आये उतना अच्छा! हम मौजूदा केन्द्रीय सरकारका भी ध्यान बंगालमें नित्य होनेवाली एक-से-एक भीषणतर दुर्घटनाओंकी ओर दिलाना चाहते हैं। बंगाल आखिर सारे भारतका एक अविच्छिन्न अङ्ग है। उसके प्रति केन्द्रीय सरकारका भी कुछ दायित्व है। केवल कानूनी और वैधानिक बन्धनोंका उल्लेख करके उसे इस दायित्वसे विमुख होना हमारे खयालसे मुनासिब नहीं है। अतएव हम चाहते हैं कि बंगालके इस असाधारण समयमें केन्द्रीय सरकार अपने उत्तरदायित्वको समझे और अपनी निष्क्रिय नीतिको छोडकर शीघ्रसे शीघ्र बंगाल-की स्थितिमें हस्तक्षेप करके वहांकी बिगडी स्थितिको सुधारे और वहाँ खतरेमें पडे हुए लाखों जनोंके जीवनकी रक्षा करे।'

जनताको बडी आशा थी कि हमारी केन्द्रीय सरकार हो जानेपर तो हम सर्वथा सुरक्षित हो जायँगे। फिर किसीकी ताकत नहीं होगी जो हमपर अत्याचार करनेकी कल्पना भी कर सके। परन्तु खेद है कि आरम्भमेंही उसकी आशा निराशामें परिणत हो गयी! पूर्व—बंगालमें आततायियोंके हाथों हिंदू नर-नारी सब प्रकारसे मिटाये जा रहे हैं और जनताकी सरकार अपने अन्य आवश्यक कार्योंमें व्यस्त है! अत्याचारियोंके अगुओंकी उसी प्रकार पूजा—अर्चना चल रही है!! क्या इसी स्व–राज्यके लोभसे–क्या इसी राष्ट्रीय-ताके मोहसे हिंदू जनताने अपनेको हिंदू न कहकर राष्ट्रीय कहा था—हिंदुत्वपर अपनेही हाथों कुठाराघात किया था?

७. लीगी योजना और ब्रिटिश नीति

स्थिति बडी भीषण है, और हिंदू न चेते तथा राष्ट्रीय-ताके मोहमें पडे हुए कांग्रेसी हिंदुओंने अपनेको न सँभा-ला तो हालत और भी बिगडेगी। मुसल्मान नेताओंका लक्ष्य केवल पाकिस्तानही नहीं है, वे सारे भारतपरही नहीं, तमाम एशियापर इस्लामका झंडा फहराना चाहते हैं और सारे भारतवर्षको इस्लामधर्मी बनाना चाहते हैं। उन लोगोंके पिछले व्याख्यानोंसे यह स्पष्ट है। अलीगढमें जो परचे यूनिवर्सिटीकी दीवालोंपर चिपकाये मिले बतलाये जाते हैं, उनमें लिखा था—

१. गाँवोंमें जाकर प्रचार करो और कार्यका संगठन करो। अपनेकोही अपना नेता मानो और जनताको नीचे लिखे साधनोंकी शिक्षा दो।

२. गुप्त सभाएँ करो, और मुजदा (सदस्य) बनाओ। तीव्र साम्प्रदायिक भावनाएँ बढाओ। जनता (मुस्लिम) को आग लगाने और झूठी अफवाहें फैलाने आदिके साधन और तरीके बतलाओ जिससे वे हिंदुओंमें आतङ्क फैला सकें। उन्हें तोड—फोड और विध्वंसके तरीके सिखलाओ।

३. सब लोगोंको अपने घरोंमें अस्त्र शस्त्र— जैसे लाठी, चाकू, बंदूक, पिस्तौल आदि रखने चाहिये और लडाईकी कलाको सीखना और उसका अभ्यास करना चाहिये।

४. हर आदमीको सरकारी सम्पत्ति और इमारतें तथा हिंदुओंकी सम्पत्तिके नाश करनेके, तार काटने और रेलवे-लाइन तोडनेके वैज्ञानिक तरीके भलीभाँति जानने चाहिये।

५. (क) पुलिसके कितने जवान सहायतार्थ मिल सकेंगे, इसका पूरा-पूरा पता अधिकारियोंको अवश्य रखना चाहिये। (ख) उस शहरकी पुलिसके पास कौन— कौनसे अस्त्र शस्त्र आदि हैं, इसकी पूरी जानकारी रखनी चाहिये। (ग) पुलिस— चौकियोंपर पहलेसे लगे हुए वायरलेस सेटोंको नष्ट कर देना चाहिये। (घ) सेना और पुलिसमें काम करनेवाले मुसल्मानोंको सरकार और हिंदुओंके विरुद्ध भडकाना चाहिये।

६. प्रत्येक शहरमें प्रभावशाली मुसल्मान रईसोंपर दबाव डालना और उनसे पूर्ण सहायता लेनी चाहिये। गुंडे और लडाके लोगोंको अवश्य प्रोत्साहित करना और उन्हें नियुक्त करना चाहिये।

इसके अतिरिक्त, हालमें जो सूचनापत्र लीगी समुदायमें वितरण किया बताया जाता है, वह यदि सत्य है तो इतना-कहना पर्याप्त होगा कि मुसल्मान नेता भारतवर्षमें हिंदू-जाति और हिंदू— सम्पत्तिका नाम मिटाने, कांग्रेस- सरकारको

नष्ट— भ्रष्ट करने, कांग्रेसी नेताओंके तथा राष्ट्रीय मुसल्मानोंके प्राण लेने और हर तरहसे उपद्रव करनेपर तुले हुए हैं! कुछ महीनों पूर्व मियाँ लियाकत अली खाँ और मियाँ गजनफर अलीके भाषणोंमें भी यह बात स्पष्ट थी। अब अन्तःकालीन सरकारमें लिये जा चुकनेकी घोषणाके बाद भी उन्होंने जो कुछ कहा है उससे उनकी नीति और नीयतका स्पष्ट पता लग जाता है। उस दिन मियाँ गजनफर अलीने कहा था— 'अन्तःकालीन सरकारमें मुस्लिम लीगके शामिल होनेका यह अर्थ नहीं है कि हम लोगोंने वर्तमान नीति स्वीकार कर ली है। इस सरकारमें शामिल होनेमें हमारा उद्देश्य पाकिस्तान कायम करना ही है। मैं आपलोगोंको आश्वासन दिलाता हूं कि हम पाकिस्तान लेकर ही रहेंगे। केन्द्रमें कांग्रेसी सरकार बननेके बादसे जो देशमें अनेकों उपद्रव हुए, इनसे साबित होता है कि भारत के दस करोड मुसल्मान किसी भी सरकारको तबतक नहीं मानेंगे जबतक उस सरकारमें इनके प्रतिनिधि शामिल नहीं कर दिये जाते। हमलोग क़ायदेआजम मियाँ जिन्नाके नेतृत्वमें पाकिस्तान लेकर ही रहेंगे। मैं अन्तःकालीन सरकारमें शामिल होकर कांग्रेसको यह विश्वास करा दूंगा कि मुस्लिम लीगके सहयोग बिना भारतमें कोई सरकार सुचारु रूपसे शासन नहीं कर सकती। साथ ही उसे यह भी बता दूंगा कि भारतीय मुसल्मानोंकी एकमात्र प्रतिनिधि संस्था लीग ही है।………'

बंगाल तथा भारतके अन्यान्य भागोंके जघन्य कार्योंकी चर्चा करते हुए मियां गजनफर अलीने कहा कि 'इन घटनाओंसे कांग्रेसको पाकिस्तानके सम्बन्धमें अपनी राय बदलनी ही होगी।'

उपर्युक्त शब्दोंका अर्थ सहज ही समझा जा सकता है। इन शब्दोंमें इन हत्या काण्डोंका प्रकारान्तरसे समर्थन ही नहीं, पाकिस्तानकी राय न बदलनेपर ऐसे ही काण्ड करते रहनेका इनका संकेत भी स्पष्ट प्रकट है।

लोगोंने लीगको बडे चावसे अंदर मिलाया। कुछ भोले देशवासियोंने आश्वासनकी साँस लेकर सोचा— 'चलो लीगी सरकारमें आ गये, अब तो उपद्रव शान्त हो ही जायँगे। सब लोग सुख-चैनसे रहेंगे।' परन्तु इन लीगियोंके कारनामें ज्यों-ज्यों सामने प्रकट होते हैं त्यों-त्यों सभीकी आँखें खुलने लगी हैं। अब तो महात्मा गाँधीजीने भी स्पष्ट शब्दोंमें इनकी नीयतपर संदेह प्रकट किया है। विचारशील सर चिमनलाल सीतलवाडने अपने वक्तव्यमें कहा है कि 'जब दो दलोंके परस्पर मिलकर सरकार बनानेका प्रसंग आता है तो वहाँ समान हितकी शासन-सम्बधी नीति स्थिर की जाती है न कि राजनीतिक दलोंकी स्थितिके बारेमें निर्णय किया जाता है। इस समय लीगके शामिल हो जानेके बाद केन्द्रमें जो सरकार बनी है उसे संयुक्त सरकार कहना ठीक नहीं। परस्पर अविश्वास तथा शत्रुताकी भावनासे अस्थायी सरकारमें प्रविष्ट होनेका परिणाम कल्याणकर नहीं।'

लीगके द्वारा नियोजित अस्थायी सरकारके अम्बेडकरी अन्त्यज सदस्य श्रीयोगेन्द्रनाथ मण्डलने कहा है कि 'मन्त्रिमण्डलमें संयुक्त उत्तरदायित्व नहीं होगा; क्योंकि लीग और काँग्रेसमें समझौता नहीं हुआ है।'

मुस्लिम लीगके प्रधान मन्त्री और अन्तःकालीन सरकारके सदस्य मियाँ लियाकत अली खाँने कहा है– 'सच बात तो यह है कि आदमीको वही करना चाहिये जो उसके शत्रुको पसंद न हो। कांग्रेस अपने दिलमें यह नहीं चाहती कि मुसलिम लीग अस्थायी सरकारमें शामिल हो, इसीलिये मुसलिम लीगने अस्थायी सरकारमें शामिल होनेका निश्चय किया है। सरकारके मुसलिम लीगी मेम्बर सरकारके सामने आनेवाले प्रत्येक प्रश्नपर निस्सन्देह साम्प्रदायिकताकी दृष्टिसे विचार करेंगे और किसी भी ऐसे कानूनका जोरोंके साथ विरोध करेंगे जिसका मुसलिम हितोंपर विरुद्ध प्रभाव पडता हो।'

इससे मालूम होता है कि कांग्रेस-सरकारको असफल बननेके लियेही ब्रिटिश सरकारने लीगको तैयार करके अन्तःकालीन सरकारके मन्त्रि-मण्डलमें घुसाया है ताकि परस्परका झगडा कभी मिटेही नहीं और देशवासियोंको ब्रिटेनकी आवश्यकताका अनुभव होने लगे। मुसल्मान भारतको पूर्णतया इस्लामी झंडेके नीचे लानेका स्वप्न देखकर विवेकको खो चुके हैं। इसलिये उनसे कुछ कहना भी नहीं है। कहना तो है कांग्रेससे जो अपनेको विवेकयुक्त मानती है और जिसने बहुत बडा उत्तरदायित्व अपने सिर उठा रक्खा है। यह सत्य है कि उसको भी भाँति-भाँतिकी विकट विकट परिस्थितियोंका सामना करना पड रहा है, तथापि यह तो कहनाही होगा कि इस नाजुक स्थितिमें यदि उसने दृढतासे अपने कर्तव्यका

पालन नहीं किया, किसी कारणविशेषसे वह झुकती ही गयी तो हिंदुओंकी और हिंदुस्थानकी तो हानि होगी ही, उसकी भी प्रतिष्ठा नष्ट हो जायगी। जनताके मनमें जो उसके प्रति श्रद्धा है, वह नहीं रहेगी। और जब वह लोक-दृष्टिमें अश्रद्धाकी पात्र रह जायगी तब उसका अस्तित्व किस रूपमें कैसे रहेगा, इसपर अभीसे गंभीरताके साथ विचार करना चाहिये। आज यदि मुस्लिम लीगका सामना करनेवाली हिंदु-सभा उतनी ही बलवान् रही होती तो यह नौबत ही नहीं आती। परन्तु राष्ट्रीयताके मोहने हिंदुओंके द्वारा ही हिंदु-सभाकी प्रतिष्ठा नष्ट करवायी और आज उसीके फलस्वरूप कांग्रेसको राष्ट्रीय होते हुए भी मूर्तिमान् साम्प्रदायिक संस्था मुस्लिम लीगके सामने घुटने टेकने पड रहे हैं और जिस समय एक ओर पूर्व-बंगालमें हजारों निर्दोष नर-नारी निर्दयताके साथ मौतके घाट उतारे जाते हैं तथा हजारों सतियोंका सतीत्व नष्ट किया जा रहा है, वहां कांग्रेस उसी समय अपनी सरकारमें उन्हीं अत्याचार करानेवाले लीगी मुसल्मानोंको मिलानेके प्रयत्नमें लगी दीख पडती है। जिन मियाँ जिन्ना, गजनफर अली और सुरहवर्दी वगैरह नेताओंपर हिंदुओंके विरुद्ध मुसल्मानोंको भयंकररूपसे भड-कानेके अपराधमें खुली अदालतमें मामला चलना चाहिये था उन्हींका खुलेआम अपने कुकृत्योंपर गर्व करना और उन्हीं कुकृत्योंके बलपर अपनेको विजयी मानना क्या यह सिद्ध नहीं करता कि उनके आसुरी बलके सामने इस समय दूसरोंका बल परास्त हो चुका है!

आज भी बंगालके लीगी मुसल्मान बडे गर्वके साथ हिंदुओंको ललकार रहे हैं। कुछ दिनों पहले बंगालके मुसल-मान एम० एल्० ए० लोगोंने जो हिंदु स्त्रियोंको वेश्या बताकर उनके साथ वैसा ही सलूक करनेकी तथा बंगालके हिंदुओंकी दूकानें लूटने और हिंदुओंको मार डालनेकी बात कही थी, उन्होंने उन बातोंको नोआखाली आदिमें सच्ची करके दिखा दिया! अब उस दिन ढाकाके प्रमुख नागरिकोंने वहांके जिला मैजिस्ट्रेटसे कहा है कि "कई दिनों पहले यहांके प्रमुख राजनीतिज्ञोंने अपने भाषणोंद्वारा लोगों को मारकाटके लिये उत्तेजित किया। उनमें कई एम्० एल० ए० थे, जिन्होंने कहा है 'नोआखालीमें तो कार्यक्रमका केवल एक अंश पूरा हुआ है। यदि हमारी शर्तें मंजूर नहीं कर लेते तो नवम्बर मासकी एक खास तारीखको 'प्रत्यक्ष कारवाई' शुरू कर दी जायगी।" ढाकाके एक दूसरे मुहल्ले-के निवासियोंने भी जिला मैजिस्ट्रेटसे कहा है कि "उस मुहल्लेके मुसल्मान उन्हें धमका रहे हैं कि यदि किसी खास तारीखतक इस्लामधर्म मंजूर नहीं कर लेते तो 'भयानक कुपरिणाम' भोगना पडेगा।"

८. हिंदुओंका कर्तव्य

ऐसी असहाय स्थितिमें क्या किया जाय? अरुणा आसफअलीने महात्माजी, नेहरूजी, सरदार पटेल और मौलाना आजाद आदिको तार देकर कहा है 'बंगाल अप-नेको अनाथ और उपेक्षित अनुभव कर रहा है।' पर सच बात तो यह है, यह अनाथ और उपेक्षितकी स्थिति वस्तुतः हिंदुओंकी अपनी ही बुलायी हुई है। हिंदुओंमें अनाथ नाथ भगवान्पर विश्वास होता और वे अपना संघटन करके शक्तिका एकत्रीकरण करके उसका यथायोग्य उपयोग करते तो यह स्थिति कदापि नहीं होती। अब भी यदि हिंदू अपनेको, देशको और मुसल्मानजातिको भी विनाशसे बचाना चाहते हैं तो वे भगवान्पर विश्वास करके सुसंघ-टित हों, अपनेमें साहस और बलको बढावें, और धर्मरक्षा-र्थ मरनेके लिए तैयार हो जायँ तो आज मुसल्मानोंमें जो हिंदुओंको कमजोर समझकर आततायीपन आ गया है, वह दूर हो जाय और दोनोंमें मेल होकर दोनों कल्याण-पथपर चलने लगें। इसीसे देशका भी मङ्गल होगा। जब-तक अडोस-पडोसमें रहकर दोनों लडते रहेंगे तबतक दोनों ही दुखी और अशान्त रहेंगे। अतः अब इस समय जो करना चाहिये उसपर कुछ विचार करना आवश्यक है।

(क) जबर्दस्ती धर्म नहीं बदलता

एक बात तो यह है कि जो हिंदू नर-नारी जबर्दस्ती मुसल्मान बनाये गये हैं और बनाये जा रहे हैं, उनके लिये जगह-जगह घोषणा करवा देनी चाहिये कि जबर्दस्ती मुसल्मान बना लेनेसे वे कदापि मुसल्मान नहीं बन गये हैं। वे हिंदूही हैं और हिंदूही रहेंगे। उनके लिये किसी खास शुद्धि या संस्कारकी जरूरत नहीं है' इसी प्रकार जिन हिंदू देवियोंका जबर्दस्ती सतीत्व नष्ट किया गया है, वे भी सर्वथा निर्दोषही हैं। उनके लिये भी किसी खास

शुद्धि या संस्कारकी आवश्यकता नहीं है। इसपर भी यदि कोई शुद्धिकी आवश्यकता समझें तो उसके लिये हिंदू-समाज तैयार है। आवश्यकता होनेपर हमलोग ऐसे शास्त्रियोंको वहाँ भेज सकते हैं, जो भगवन्नामके पवित्र घोषरूपी प्रायश्चित्तसे सबका संस्कार करा देंगे।

(ख) महिलाओंका उद्धार करो

साथही उन अपहरण किये हुए नर-नारियोंका निर्दय मुसल्मानोंके हाथोंसे प्राणकी बाजी लगाकर उद्धार करना चाहिये। और उन्हें अन्नवस्त्र तथा दवाकी सहायता देनी चाहिये। सबसे पहले बुद्धिमान् और प्रतिभाशाली कार्यकर्ता और स्वयंसेवकोंको वहाँ जाकर उन हिंदू देवियोंको आततायियोंके चंगुलसे निकालना चाहिये जिनका बलपूर्वक अपहरण, धर्म-परिवर्तन और विवाह किया गया है, क्योंकि बंगालकी मुस्लिम लीग तथा लीगी सरकार यह कह रही है कि अपहरण प्रायः हुआही नहीं है। और वे अपनी इस बातको सत्य करनेके लिये उन स्त्रियोंको शीघ्र-से-शीघ्र दूर-दूरके स्थानोंमें भेज-भेजकर छिपा देना चाहते हैं।

(ग) अत्याचार बंद कराओ

सबसे आवश्यक और सबसे पहले करनेका काम तो यह है कि पूर्वबंगालमें बहनेवाली अत्याचारकी तेज धारा शीघ्र-से-शीघ्र बंद हो जानी चाहिये। इसके लिये हिंदुओंको जो कुछ भी त्याग करना पड़े, उसके लिये तैयार होना चाहिये और हिंदू—बहुसंख्याक प्रान्तोंके हिंदुओंको इस महत्कार्यमें हाथ बँटाना चाहिये।

(घ) एक सम्मान्य मित्रके उद्गार

हमारे एक सम्माननीय मित्रने, जो कुछ समय पूर्व महात्माजीके 'प्राइवेट सेक्रेटरी' रह चुके हैं, चाँदपुरसे बहुतसे करुणापूर्ण पत्र लिखे हैं, जिनसे वहाँकी स्थितिका कुछ अनुमान लगाया जा सकता है। उनके पत्रोंमेंसे कुछ अवतरण नीचे दिये जाते हैं—

'यहाँके हिंदू बड़ी असहाय स्थितिमें हैं। पुलिससे उन्हें कोई मदद नहीं मिलती, बल्कि कई प्रसङ्गोंमें तो सरकारी अफसर अत्याचारमें शामिल होते हैं। न्यायप्रिय हिन्दू अफसरोंको उनके पदोंसे नीचे गिराया जा रहा है और अवाञ्छनीय स्थानोंमें तब्दील किया जा रहा है।'

गत १३ अक्टूबरके पत्रमें वे लिखते हैं— 'आज मुसल्मानोंकी चढाईका चौथा दिन है, सारे इलाकेमें पूर्णतया अराजकता फैल रही है। इस स्थानके हिन्दू चारों ओरसे घिरे हैं और उनकी बड़ी-बड़ी इमारतें जलाकर खाक कर दी गयी हैं। जो अपनी जान बचाना चाहते हैं, उन्हें जबर्दस्ती कलमा पढना और मुस्लिम धर्म स्वीकार करना पड़ता है। कहींसे कोई पूरी खबर नहीं मिल रही है। आकाशमें दूर-दूरसे दिखायी देनेवाली आगकी लंबी लपटें हिंदुओंके घर और सम्पत्तिके विनाशकी घोषणा कर रही हैं। हजारों मुसल्मानोंके दल-के-दल घूम रहे हैं और हिंदुओंपर हमला तथा एकके बाद दूसरे हिंदू-घरोंका विनाश कर रहे हैं। मैं यह पत्र बहुत जल्दीमें केवल यहाँकी नाजुक स्थितिका दिग्दर्शन करानेके लिये लिख रहा हूँ।'

एक दूसरे पत्रमें वे लिखते हैं- 'यहाँके हिंदुओंकी दशा वही है जो खूँखार बिल्लीके सामने छोटी-छोटी चुहियोंकी होती है... वे प्रतिक्षण मौतकी प्रतीक्षा करते रहते हैं।'

'पूर्व-बंगालके हिंदुओंकी रक्षा तबतक नहीं हो सकती जबतक कि भारतके अन्यान्य प्रान्तोंके हिंदू दृढताके साथ उनकी रक्षाके लिये खड़े न हो जायँ।'

(ङ) प्राणोंकी बाजी

इन अवतरणोंसे पूर्व-बंगालकी दशाका तथा अन्य प्रान्तीय हिंदुओंके कर्तव्यका कुछ संकेत मिल सकता है। इसलिये अन्य प्रान्तीय हिंदुओंको सुसंघटित होकर आततायी मुसल्मानोंके अत्याचारोंसे अपने वंगीय भाइयोंकी रक्षा करनी चाहिये। यह स्मरण रखना चाहिये कि बंगालके हिंदू और अन्यान्य प्रान्तोंके हिंदू एकही विराट् हिंदू शरीरके विभिन्न अङ्ग हैं। एकके नाशमें दूसरेका नाश और एकके विकासमें दूसरेका विकास निहित है। आज यदि महाप्रभु चैतन्य और नित्यानन्द, रामकृष्ण और विवेकानन्द, अरविन्द और रवीन्द्र, गुरुदास और आशुतोष तथा चित्तरञ्जन और सुभाषके गौरवपूर्ण बंगकी दुर्गति है तो कल तुलसी और सूरके युक्तप्रान्तकी, शिवाजी और तिलकके महाराष्ट्रकी तथा नरसी और गाँधीके गुजरातकी वही

दुर्गति हो सकती है। अतएव—आवश्यकता पडनेपर, जहाँ ऐसे अत्याचार हो रहे हैं, वहाँ प्राणोंकी बाजी लगाकर उन्हें जाना चाहिये। अखबारोंके समाचारोंके अनुसार जब हिंदुओंको लूटने-मारने और उनकी माँ-बहनोंकी इज्जत लूटनेके लिये बाहरके मुसल्मान पूर्व बंगालमें पहुँचे हैं, तब अत्याचारपीडित हिंदू नर-नारियोंके जीवन और धर्मकी रक्षाके पवित्र कार्यके लिये बाहरके हिंदुओंका वहाँ जाना तो कर्तव्य हैही! परन्तु जो जहाँ हैं, उन्हें वहाँ भी सावधानीके साथ आत्मरक्षाका पूरा प्रबन्ध करना चाहिये। कांग्रेसके अध्यक्ष आचार्य कृपलानीजीने कहा है कि ' हम उन्हें सलाह देते हैं कि वे अपने आसपासके लोगोंसे मिलकर संघटन करें। सरकार कुछ करे या न करे, जनताको इस अराजकताका प्रतिकार करनेके लिये तैयार रहना चाहिये। और हर उपायसे अपनी आत्मरक्षा करनी चाहिये। इस बातपर विशेष ध्यान रखना चाहिये कि स्त्रियोंकी इज्जतकी रक्षा अवश्य हो।'

महात्मा गाँधीजीने कायरतासे मरनेकी अपेक्षा आत्मरक्षाके लिये बलप्रयोगको श्रेष्ठ माना है। बंगालमें इस बार ऐसे कई पवित्र उदाहरण मिले हैं, जहाँ सैकडोंकी संख्यामें स्त्री और पुरुष दोनोंही आततायियोंका बहादुरीके साथ सामना करते हुए वीरगतिको प्राप्त हुए हैं!

(च) आदर्श वीरता

नोआखाली हिंदूसभाके और वहाँकी बार एसोसियेशनके सभापति श्रीराजेन्द्रलाल रायका घर घेर लिया गया। उनके कुटुम्बमें पुरुष-स्त्री मिलाकर लगभग सौ आदमी थे। उनपर आततायियोंने हमला किया। पेट्रोल छिडककर घरमें आग लगा दी गयी। तब घरके सब लोगोंने निश्चय किया कि घरके अंदर रहकर जल मरनेकी अपेक्षा बाहर निकलकर मुकाबला करते हुए मरना कहीं श्रेष्ठ है और सभी स्त्री-पुरुष, बालक-वृद्ध, युवक बाहर निकल पडे तथा आततायियोंका सामना करने लगे। वे बडी बहादुरीसे लडे और सबसे अधिक आश्चर्य तो इस बातका है कि पुरुषोंसे भी अधिक वीरतासे स्त्रियाँ लडीं! वे बराबर आततायियोंपर वार करती रहीं। पर अन्तमें आततायियोंकी संख्या बहुत बढ जानेपर दो दिनके बाद उन्हें वीरगति प्राप्त हुई! कुछ आदमी बचे, जो इधर-उधर निकल गये, पता नहीं अब वे किस स्थितिमें हैं। ऐसी कुछ घटनाओंके और भी उदाहरण मिले हैं।

(छ) क्या करें

ये सचमुच बडे आदर्श चित्र हैं और इनको सदा ध्यानमें रखना चाहिये। पर ऐसे व्यक्तिगत प्रसंग वीरतापूर्ण होनेपर भी ये अराजकताके शिकार बने हुए नोआखाली, कुमिल्ला और चाँदपुर-त्रिपुराके असहाय लोगोंको सर्वथा बचा नहीं सकते! अवश्यही पुलिस और सेना आग बरसाकर इस आगको बुझा सकती है, जो सरकार चाहती तो अबतक बुझ ही जाती। जहाँ पाँच-सात हवाई आक्रमण होते कि सबका जोश ठंडा पड जाता। परन्तु बंगालकी मौजूदा सरकारसे यह आशा करना व्यर्थ है। ऐसी हालतमें सारी जिम्मेवारी हिंदू-युवकोंपरही आ जाती है! अब तो इन आततायियोंके आततायीपनको मिटानेका एकही मार्ग है और वह है—

तमाम देशमें लाखों-करोडों हिंदू-युवकोंका तैयार होना और प्रत्येक शहर और गाँवकी रक्षाके लिये देशभरमें बँट जाना।

(ज) आदर्श देवियाँ और उनका कर्तव्य

महात्माजीने स्त्रियोंके अपहरणपर कहा है कि ' लोगोंके मारनेसे कहीं अधिक चोट मुझे इस बातसे लग रही है कि स्त्रियोंका अपहरण किया जा रहा है...... मैं यहाँ सीताकी अतुलनीय शक्तिका भी जिक्र करूँगा, जिनको रावणकी पूरी शक्ति अपवित्र नहीं कर सकी थी। स्त्रियोंको सिरके एक बालके छुए जानेके पहलेही मरनेकी कला अवश्य सीख लेनी चाहिये।' बात ठीक है। सतीत्वकी रक्षाके लिये राजपूत रमणियोंने जलती आगमें कूदकर जौहरव्रतका आदर्श सामने रक्खा था। भगवती जानकीजी भी अशोकवाटिकामें देह-त्यागका विचार कर रही थीं।

आसाममें पहुँचे हुए पूर्वबंगालके शरणार्थी लोगोंने वहाँकी रोमाञ्चकारी घटनाओंका वर्णन करते हुए बताया है कि ' राजपूतानेकी प्रसिद्ध राजपूत रमणियोंकी भाँति पूर्व-बंगालकी बहुसंख्यक हिंदू देवियोंने भी आगमें कूदकर, विष

खाकर और फाँसी लगाकर अपनी आबरूको बचाया है । ' वे देवियाँ धन्य हैं !

परन्तु स्त्रियोंको मरनेकी कला सीखनेके साथही साक्षात् महाकाली बनकर आततायीको मारनेकी कला भी अवश्य सीखनी चाहिये । उन्हें चाबियोंके गुच्छेकी जगह तेजधार छूरा रखना चाहिये और किसी भी नीच राक्षसके द्वारा बुरी चेष्टाकी सम्भावना दीखतेही साहसके साथ उसे समुचित दण्ड देना चाहिये । यह पाप नहीं, पुण्य है । धर्मसम्मत कर्तव्य है । क्या सीता-सावित्री, अनुसूया-अरुन्धती और दमयन्ती-द्रौपदीकी सन्तान भारतीय सती-शिरोमणि देवियाँ अपने पवित्र सतीत्वकी रक्षाके लिये सदियोंसे छिपे हुए अपने तेजको प्रकट नहीं करेंगी ? क्या भद्रकाली-महाकाली, चामुण्डा-चण्डिका और दुर्गा-नारायणीके रूपमें प्रचण्ड-दोर्दण्ड-दैत्य-दर्पका दलन करनेवाली, विविध विचित्र आयुधोंको आभूषणकी तरह धारण करनेवाली और अपने प्रबल हुंकारमात्रसे असुर-राक्षसोंका विनाश करनेवाली महाशक्तिरूपा भारतीय देवियाँ कायरताको त्यागकर पवित्र सतीत्वपर आक्रमण करनेवाले दुष्ट आततायियोंका हृदय विदीर्ण न कर देंगी ?

आत्मरक्षार्थ और सतीत्वरक्षार्थ किया जानेवाला बलप्रयोग तो वर्तमान कानूनमें भी अपराध नहीं माना जाता, बल्कि कहीं-कहीं तो ऐसे बहादुर व्यक्ति पुरस्कारके पात्र माने जाते हैं ।

(झ) आततायीका दमन धर्म है

पुरुषोंको भी चाहिये कि जहाँ-कहीं मा-बहिन-बेटियोंपर अत्याचार होनेका प्रसंग हो, वहाँ जानकी बाजी लगाकर आततायीका दमन करें ।

मनु महाराज लिखते हैं—

आततायिनमायान्तं हन्याद्देवाविचारयन् ।
नाततायिवधे दोषो हन्तुर्भवति कश्चन ॥
(मनु. ८।३५०-३५१)

अपना अनिष्ट करनेके लिये आते हुए आततायीको बिना विचारे मार डालना चाहिये । आततायीके मारनेसे मारनेवालेको कुछ भी दोष नहीं होता ।

आततायी कौन है ? वशिष्ठजी कहते हैं—

अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रपाणिर्धनापहः ।
क्षेत्रदारापहर्ता च षडेते ह्याततायिनः ॥
(वशिष्ठस्मृति ३।१९)

आग लगानेवाला, विष देनेवाला, हाथमें शस्त्र लेकर मारनेको उद्यत, धन हरण करनेवाला, जमीन छीननेवाला और स्त्रीका अपहरण करनेवाला—ये छहों आततायी हैं ।

इन लक्षणोंवाला पुरुष हिंदू हो या मुसल्मान अथवा अन्य किसी जातिका, वह आततायी है और धर्मशास्त्रके अनुसार दण्डनीय है ।

(ञ) धनियोंका कर्तव्य

हिंदू धनियोंका इस समय सर्वप्रथम कर्तव्य होना चाहिये हिंदूधर्म, हिंदूजाति, हिंदू-संस्कृति और हिंदू देवियोंकी रक्षाके लिये अपने धनको मुक्तहस्तसे लगाकर उस धनको धन्य करना । जो अपना तन-मन-धन धर्मकी सेवामें लगाता है, वही सार्थक है ।

(ट) तन-मन-धन अर्पण

असलमें मुसल्मानोंके पास, जहाँतक मेरा खयाल है, वह भावनाही प्रधान बल है कि हमें अपना तन-मन-धन इस्लामके लिये लगा देना है । यद्यपि वे भूले हुए हैं, धर्मकी यथार्थ सेवा नहीं कर रहे हैं, तथापि उनमें यह भावना तो हैही । इसी प्रकार यदि हिंदू नर-नारी अपने उदात्त तथा विशाल—सबमें एक आत्मा और एक ईश्वरका दर्शन करनेवाले—महान् धर्मका आश्रय लेकर अपनी पवित्र संस्कृतिकी रक्षाके लिये—जो समस्त जगत्की एकमात्र कल्याणकारिणी और संरक्षिका है, तन-मन-धन अर्पण करनेके लिये तैयार हो जायँ तो वे क्या नहीं कर सकते ? मुसल्मानोंके धर्मका अविवेकपूर्ण जोश जब उनको इतना संघटित कर सकता है तो हिंदुओंका विवेकपूर्ण धर्मभाव क्या हिंदुओंको सुसंघटित करके हिंदू-जातिके साथही इस्लाम, ईसाई तथा जगत्की अन्यान्य जातियोंकी सेवाके लिये सुयोग्य न बना देगा ?

(ठ) सबसे प्रार्थना

भारतकी सिख-जातिसे, जिसके छोटेसे जीवनका इतिहास त्याग और धर्मरक्षार्थ प्राणोंके बलिदानकी पवित्र घटनाओंसे भरा है, पवित्र राजपूतजातिसे, विभिन्न प्रान्तोंके

वीर ब्राह्मण और क्षत्रियोंसे तथा स्वतन्त्र हिंदू-राज्य नेपालके गोरखा वीरोंसे भी निवेदन है कि वे सब एक होकर हिंदूधर्मकी रक्षाके लिये अपने आपको समर्पण कर दें।

प्रभु ईसामसीहके सच्चे अनुयायी सहृदय ईसाई सज्जन और कुरानशरीफका सच्चा अर्थ लेनेवाले ईमानदार सच्चे मुसल्मानोंसे भी हमारी विनय है कि मानवताके नामपर वे भी अपनी आवाज बुलंद करें और ऐसी चेष्टा करें कि जिससे इस प्रकारके नृशंस अत्याचार असम्भव हो जायँ।

हिंद-आजाद-फौजके वीर अफसरों और सिपाहियोंको भी पूर्व-बंगालके पीडित भाई-बहिनोंके बचानेके लिये कुछ क्रियात्मक प्रयत्न अवश्य करना चाहिये।

(ड) मनुष्यताको चुनौती

सहयोगी 'सर्चलाइट्' विगत २३ अक्टूबरके अङ्कमें 'मनुष्यताको चुनौती' शीर्षक सम्पादकीय लेखमें लिखता है—

'पूर्व-बंगाल आज मानवताको एक चुनौती है। आत्म-सम्मानका भाव इतना नष्ट नहीं हो गया है कि चुपचाप हम एक दर्शककी तरह इस रोमहर्षक काण्डको देखते रहें; क्योंकि ऐसी पशुताकी मिसाल इतिहासमें नहीं मिलती। बातूनी सरगर्मी बेकार है। कोरी मौखिक सहानुभूति निरर्थक है। मुस्लिम लीगने हमारी स्त्रियों और बच्चोंको नष्ट कर डालनेका बीडा उठाया है। तलवारके बलपर वह इस्लामका प्रचार करना चाहती है। हमारा धर्म और हमारी इज्जत खतरेमें है। बंगालका मन्त्रीमण्डल इन घटनाओंको बहुत दबाकर और घटाकर बतला रहा है जैसे कुछ हुआही न हो, वस्तुस्थितिको देखते हुए उसकी यह साफ बेईमानी है।'

'लीगके नेता इस काण्डको देखते हुए भी नहीं देख रहे हैं और वायसराय वेवल तथा गवर्नर बरोजने चुप्पी साध ली है। लीगी अखबार डंकेकी चोट ऐलान कर रहे हैं कि 'लो, लीगकी उपेक्षाका फल भोगो।' मियाँ गजनफर अली लाहौरमें एक सार्वजनिक भाषणमें हिंदुओंका मजाक उडाते हुए कहते हैं—'बंगालमें तथा हिंदुस्थानके अन्य प्रान्तोंमें जो कुछ हो रहा है, उससे कांग्रेस नसीहत ले और पाकिस्तानके बारेमें अपना निर्णय बदले।' इन वक्तव्योंसे लीगी नेताओंकी नीयत साफ जाहिर होती है। वे चाहते हैं कि निहत्थे व्यक्तियोंपर निर्लज्जतापूर्ण जुल्म किये जायँ, स्त्रियाँ भगायी जायँ और 'कत्ले आम' का दौर-दौरा चले। यदि सचमुच यही बात है तो मियाँ गजनफर अपनेही प्रान्तमें इस शैतानी नीतिको क्यों नहीं आजमाते ?......

'यह भयानक चुनौती साफ-साफ समूचे देशको दी गयी है।

'हमारा विश्वास है अभी हममें इतनी मनुष्यता शेष रह गयी है कि इस चुनौतीको स्वीकार कर लें और हममें इतनी ताकत है कि इस पैशाचिकताका मुकाबला कर सकें। स्त्रियोंका सतीत्व खतरेमें है, हमारा धर्म संकटमें है। हम बंगालके इन विपन्न भाई-बहिनोंके साथ अपनी एकात्मता सिद्ध करें और पूरी ताकत लगाकर अपने समस्त साधनोंको जुटाकर इनकी सेवा तन, मन और धनसे करें और आततायियोंकी दुष्टताका ऐसा मुँहतोड जवाब दें कि फिर वे ऐसी शरारतका नाम न लें। यदि वे गृहकलहपर-ही उतारू हैं तो क्या हर्ज है, हो ले गृहकलह और चख लें वे इसका भी मजा। हमारा विश्वास है कि यदि सम्पूर्ण देश एक स्वरसे इस चुनौतीका जवाब देना चाहे तो जनाब वायसराय साहब, बंगालके गवर्नर साहब और उनके पिछलगे लीगी भी सीख जायँगे कि शिष्ट व्यवहार किसे कहते हैं।'

सहयोगीके उपर्युक्त कथनपर समस्त हिंदुओंको गम्भीरतासे विचार करना चाहिये।

(ढ) पूज्यपाद महामना मालवीयजीका उपदेश

'मैं अनुभव करता हूँ कि मानवता संकटमें है। हिन्दू संस्कृति और धर्म भी खतरेमें हैं। आज एक असाधारण वस्तुस्थिति उत्पन्न हो गयी है। हिन्दुओंको चाहिये कि सर्वसाधनसम्पन्न होकर संगठित हो जायँ और अपनी रक्षाकी समुचित व्यवस्था कर लें। आत्म-रक्षा और आत्म-संयम हमारा व्रत और इस भूमिमें स्वयं रहना तथा मुसल्मानोंको रहने देना हमारा उद्देश्य होना चाहिये।

'वर्षोंसे हिंदू जी-जानसे अथक परिश्रम करते रहे कि सच्ची हिंदूमुस्लिम एकता कायम हो। वे सहयोग भी करते रहे और सहिष्णु भी बने रहे, किन्तु मुझे इस बातका

दुःख है कि अधिकांश मुसल्मानोंने सहिष्णुताका अर्थ हिंदुओंकी कमजोरी समझा। वे हिंदुओंसे सहयोग भी करना नहीं चाहते। उन लोगोंके प्रति हम दया नहीं दिखा सकते जो हिंदुओंको शान्तिपूर्वक रहने देना नहीं चाहते। यदि हिंदू संघटित नहीं हुए तो वे अब बच नहीं सकते। मैं यह वक्तव्य कोई अशान्तचित्तसे नहीं, अपितु सोचकर दे रहा हूँ।

' मातृभूमि, धर्म, संस्कृति और अपने हिंदू भाइयोंके प्रति भी हिंदूनेताओंको अपना कर्तव्य-पालन करना चाहिये।

' यह परमावश्यक हो गया है कि हिंदू संघटित होकर निःस्वार्थ और देशभक्त कार्यकर्ताओंका दल तैयार करनेके लिये सचेष्ट हो जायँ। उन कार्यकर्ताओंका एकमात्र उद्देश्य सेवा होना चाहिये। साथही, विभिन्न जातियोंका भेद-भाव और अन्तर भुलाकर हिंदू एकताबद्ध हो जायँ ताकि हिंदुओंका अस्तित्व तथा उनकी संस्कृति और आदर्श अक्षुण्ण बनाये रखनेके लिये हम भरपूर उद्योग कर सकें।

' मुस्लिम नेताओंके ' विषैले भाषण ' अज्ञात मुस्लिम संस्थाओंद्वारा तैयार किये गये गुप्त कागजात, लीगके राजनीतिक व्यवहार, कलकत्तेके नरमेध तथा पूर्वी बंगाल-की भीषण अराजकता आदि घटनाओंसे किस हिन्दूका हृदय क्रोधाग्निसे प्रज्वलित हो, हिंदू जातिकी रक्षाके लिये कुछ कर डालनेको फड़क नहीं उठेगा ? यदि हिंदू जाति जीवित रहना चाहती है तो वह अपना कर्तव्य समझे। दशकोंसे हिंदुओंके विचार धार्मिककी अपेक्षा राष्ट्रीय रहे हैं। अहिंसामें विश्वास और सत्यमें प्रेम रहा है। एकही राष्ट्रके दो भाइयोंसे वे झगडा-फसाद करना नहीं चाहते। पर मुसल्मानोंने हिंदुओंकी इस भावनासे अनुचित लाभ उठाया है। हिंदू-मुस्लिम संघर्षकी जड झूठा प्रचार है, और इस प्रचारमें मुसल्मान सफल रहे हैं। हिंदू वर्षोंसे सताये जा रहे हैं। राष्ट्रीय संस्था कांग्रेस और साम्प्रदायिक संस्था मुस्लिम लीग दोनोंको समानाधिकार दिये गये हैं और इस प्रकार बहुसंख्याक समुदायके अधिकार कुचले गये हैं। राष्ट्रीय भारतके नामपर हिंदुओंकी आकांक्षाएँ, संस्कृति और धर्म विकासकालमेंही धूलमें मिलाये जा रहे हैं। हिंदुओं तथा अन्यान्य समुदायोंकी राजनीतिक भलाई कांग्रेसके हाथमें भलेही सुरक्षित समझी जाय, किन्तु जो जो समस्या विशुद्ध साम्प्रदायिक है, जो प्रश्न हिंदुओंके धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक हितोंसे सम्बन्ध रखते हैं, उनपर अन्तिम निर्णय हिंदू-संस्थाही दे सकती है। धर्मपरिवर्तन रोकाही जाना चाहिये। विधर्मी बनाये गये हिंदुओंको पुनः हिंदू बनानेके लिये तो सुविधाएँ मिलेंही, साथही उन मुसल्मानोंको भी सुविधाएँ मिलें, जो हिंदू बनना चाहते हों। हिंदू भय छोडकर वीर और बलवान् बनें। अपने बचावके लिये वे सैनिक शिक्षा प्राप्त करें तथा केन्द्रीय स्वयंसेवक-दल तैयार करें। वे यह भी घोषित कर दें कि हिंसाद्वारा वे किसीका कुछ बुरा करना नहीं चाहते।

' धार्मिक भावनाओंसे प्रेरित होकर हिंदुओंको चाहिये कि वे मुसल्मानोंको ललकार दें। अपने बचावका ऐसा प्रबन्ध हो कि कोई भी आक्रमण सफल न हो। किसी भी मूल्यपर शान्ति स्थापित करनेसे इस समस्याका समाधान नहीं किया जा सकता। भारतीयोंको चाहिये कि वे हिंदुओंकी सेवा करें, बर्बरतापूर्ण आक्रमणोंसे हिंदू अपनी संस्कृति और धर्म उन्मूलित होने न दें, न अपनी संख्या ही घटने दें। हिंदू हिंदुओंके लिये सहिष्णु बनें; पर उन मुसल्मानोंके प्रति सहिष्णु न बनें जो हिंदुओंको शान्तिपूर्वक रहने देना नहीं चाहते। मियाँ गजनफर अली खाँ तथा अन्यान्य लीगी नेताओंने अपनी अशिष्ट भाषाद्वारा हिंदुओंको चुनौती दे दी है। मैं उनकी-जैसी भाषामें कुछ कहना नहीं चाहता। मैं हिंदुओंसे यह भी नहीं कहता कि जहाँ मुसल्मान कम हैं वहाँ उनपर चोट करें, बल्कि मैं चाहता हूँ कि जहाँ हिंदू कम हैं वहाँ वे संगठित होकर आत्मरक्षा करें। '

(ण) तेरह साधन

सबसे अन्तिम बात है भगवान्की शरणागति, जो हिंदू सभ्यताकी मूल भित्ति है, हिन्दूमात्रको भगवान्के शरण होकर मानवताकी रक्षाके लिये प्रार्थना करनी चाहिये। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित १३ साधन बहुत कामके मालूम होते हैं। प्रार्थना है कि इस विकट परिस्थितिमें इन बातोंपर कृपया अवश्य ध्यान दें और अपना कर्तव्य निश्चित करके कार्य शुरू कर दें।

(१) देशभरमें ' हिंदूरक्षक दल ' का संघटन हो, जिसमें कम-से-कम पचास लाख युवक रहें। वे

अपने नगरों और गाँवोंके अतिरिक्त जहाँ आवश्यकता हो, वहाँ जाकर धर्म, जीवन, सम्पत्ति तथा सतीत्वकी रक्षा करें। पर यथासम्भव इनकी नीति आक्रमणात्मक न होकर रक्षणात्मक हो और वे किसी भी हालतमें किसी भी निःशस्त्र स्त्री और बालकपर हाथ न उठानेकी प्रतिज्ञा करें।

(२) इस बृहत् संघठनके अतिरिक्त प्रत्येक नगरमें मुहल्लों तथा गाँवोंमें सुव्यवस्थित 'रक्षादल' का निर्माण हो।

(३) आत्मरक्षाके लिये नर-नारियोंमें विश्वास उत्पन्न किया जाय।

(४) इतना नैतिक और शारीरिक बल बढ़ाया जाय कि जिसे देखकर दूसरोंके मनमें कभी किसी प्रकार अत्याचार करनेका साहसही न हो।

(५) घायलों तथा बीमारोंकी सेवाके लिये मुहल्ले-मुहल्ले और घर-घरमें 'फर्स्ट एड' (शीघ्र उपचार) की व्यवस्था की जाय, प्रसंग आनेपर सेवा-शुश्रूषाका प्रबन्ध किया जाय। राशनसे बचाकर कुछ अन्नका घरोंमें संग्रह किया जाय।

(६) घायलों, बीमारों तथा अत्याचारपीड़ित परिवारों तथा व्यक्तियोंकी सहायताके लिये धन एकत्र किया जाय और उसका सदुपयोग किया जाय।

(७) स्त्रियोंको आत्मरक्षा और सतीत्व-रक्षाके योग्य साधन प्रदान किये जाय और उनमें वीराङ्गनाओंके स्वभावकी स्फूर्ति हो, ऐसा उपदेश दिया जाय तथा साहस भरा जाय।

(८) बच्चोंको सदा सुरक्षित रक्खा जाय।

(९) आपसके मतभेदों तथा वैर-विरोधको भुलाकर आततायीका सामना करनेके लिये संगठित रूपसे वीरताके साथ तैयार रहा जाय।

(१०) अफवाहें न फैलने दी जायँ, न अफवाहोंपर विश्वास किया जाय वरन्तु सदा चौकन्ना भी अवश्य रहा जाय।

(११) छेड़-छाड़ न हो, और मामूली छेड़-छाड़में बात न बढ़ने पावे, इसके लिये सतर्कता तथा बुद्धिमत्तासे काम लिया जाय।

(१२) हिंदू-मुसल्मानोंमें तथा अन्यान्य परस्परविरोधी लोगोंमें प्रेम, सद्भाव तथा विश्वास उत्पन्न हो इसके लिये सदा सच्चे दिलसे एक दूसरेकी सेवा तथा सहायता की जाय।

(१३) हिंदू-मुसल्मान कोई भी शरणमें आ जाय, उसको ईमानदारीके साथ आततायीके हाथोंसे बचाया जाय। परन्तु होम करते हाथ न जल जाय, इसके लिये पूरा सावधान भी रहा जाय।

(९) आध्यात्मिक साधनकी आवश्यकता

इसीके साथ असली उपाय भगवत्प्रीत्यर्थ देवाराधन अथवा भगवदाश्रयपूर्वक भगवदाराधनका आश्रय लेना और भगवान्‌की कृपाशक्ति तथा उनके मङ्गल-विधानमें विश्वास रखकर भगवदाज्ञानुसार कर्तव्यकर्मका पालन करना चाहिये।

ऐसे अवसरोंपर जगह-जगह धार्मिक अनुष्ठान, शास्त्रीय मन्त्रपुरश्चरण, वैदिक तथा तान्त्रिक प्रयोग, चण्डी-गणेशकी सविधि उपासना तथा वैदिक और पौराणिक यज्ञ-याग होने चाहिये। इनसे प्रकृतिके मूलमें परिवर्तन होगा और लोगोंकी बुद्धिमें सात्त्विकता आवेगी। साथही अपनी-अपनी स्थितिके अनुसार विश्व-शान्ति तथा धर्माभ्युदयकी कामनासे अथवा केवल भगवत्प्रीत्यर्थ सात्त्विक दान, श्रीमद्भागवत, श्रीमद्भगवद्गीता तथा श्रीरामचरितमानसके पारायण और अखण्ड हरिकीर्तन होने चाहिये। सच्चे हृदयसे सबको सद्बुद्धिकी प्राप्ति तथा सबके कल्याणके लिये भगवान्‌से सच्ची प्रार्थना करनी चाहिये।

यह याद रखना चाहिये कि हिंदू, मुसल्मान, पारसी, ईसाई सभी एकही भगवान्‌के स्वरूप, अंश या सन्तान हैं। सभीमें आत्मारूपसे एकही भगवान् विराजमान हैं। एकके अमङ्गलमें दूसरेका अमङ्गल और एकके मङ्गलके दूसरेका मङ्गल निहित है। अतएव ऐसी सद्भावना और प्रार्थना करनी चाहिये कि भगवान् सबका कल्याण करें। सबको सन्मति और सद्गति प्रदान करें। जगत्‌में सर्वत्र सुख-शान्तिका प्रसार और विस्तार हो। सभी सुखी हों, सभी तन-मनसे नीरोग हों, सभी सदा मङ्गलोंका साक्षात्कार करें और दुःखका भाग किसीको भी न मिले।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्॥

—हनुमानप्रसाद पोद्दार

' वंगकन्या ' की मर्मस्पर्शी अपील

धर्म-पिताओ ! भाइयो ! और सुहृदो !–

मैं लुट गयी ! मेरा सतीत्व नष्ट कर दिया दुर्दान्त दुर्वृत्तोंने ! मेरी मूल्यवान् मर्यादाको भ्रष्ट कर दिया आततायियोंने ! हाय ! तुम देख रहे हो ! क्या देख रहे हो ? क्या इससे अधिक मेरी और कोई दुर्दशा हो सकती है ?

मैं अपने पति-पुत्रोंको बचानेके लिये बहुत तड़पी, मैं लड़ी ! मैं चाहती थी दुष्ट मेरे प्राण ले लेते, परन्तु उन्होंने प्राण नहीं लिये–मेरा धर्म लिया, मेरी इज्जत लूटी और मेरा सर्वस्व छीन लिया !

मेरे सामने मेरे स्वामीकी बुरी तरहसे हत्या की गयी !

मेरे सामने ही मेरे पिताको कत्ल किया गया ! हाय हाय ! मेरी आँखोंके सामने ही मेरे दुधमुँहे बच्चे-बच्चियोंपर अमानुषिक अत्याचार किये गये। और फिर मैं बलपूर्वक घसीटी गयी ! मेरे माथेका सिन्दूर जूतियोंसे पोंछा गया ! मेरी शंखकी चूड़ियाँ तोड़ी गयीं ! और मुझसे बलपूर्वक निकाह किया गया ! आज भी मैं बुरखा ओढे उन्हींके घरमें पड़ी नरकाग्निमें जल रही हूँ ! मेरा उद्धार करनेवाला क्या कोई नहीं रहा ?

मेरे पति, मेरे पिता, मेरे श्वशुर और मेरे पुत्रोंको जल्लादोंने बाँध लिया। मुझ अबलापर उन्हींके सामने अमानुषी बलात्कार किया। मेरे सामने ही उनके खूनसे हाथ रँगे। उसी खूनसे मेरा मुँह रँगा और फिर मेरी मर्यादाका नाश किया !

अरे शङ्कराचार्य ! ओ रामानुजाचार्य ! अरे निम्बार्काचार्य, ओ मध्वाचार्य, अरे वल्लभाचार्य, ओ चैतन्य और नित्यानन्दके वंशधर, ओ साधुसम्प्रदायके विभिन्न आचार्य ! तुम सब कहाँ मर गये ? तुम्हारे धर्मपर कौन-सा वज्रपात हो गया ?

ओ ब्राह्मणो ! अरे क्षत्रियो ! ओ वैश्यो ! ओ शूद्रो ! अपनी बहिन-बेटियोंकी इस दुर्गतिको देखकर भी तुम्हारा खून नहीं खौलता ? तुम जी क्यों रहे हो !

अरे गुरु नानक और गुरु गोविन्दसिंहकी सन्तान शूर सिखो ! क्या तुम्हारा प्रसिद्ध वीरत्व भी आज खो गया–खो गया ? सिख बहादुरोंके जीते-जी हिंदू-कन्याका अपहरण हो, हिंदू सतीका सतीत्व नाश हो ! मैं क्या कहूँ ! इस वक्त सिखोंकी कृपाण क्या म्यानके अंदर छिपी रहकर ही शोभा पावेगी ?

ओ मालवीय बाबा ! सुना है तुम मेरी करुणकथा सुनकर व्यथाके मारे मूर्च्छित हो गये। बूढ़े तपस्वी ! आशीर्वाद करो–हिंदुओंके रक्तमें फिर जोश आवे और वह हिंदुत्वको बचानेके लिये जोरसे बह निकले ! तुम्हारे विश्वविद्यालयके छात्र क्या तुम्हारी बात मानकर मेरे उद्धारके लिये कुछ नहीं करेंगे ?

अरे गाँधी बाबा ! तुमको राष्ट्र–पिताके नाते मैंने धर्मपिता माना। पर मालूम होता है तुम्हारा कलेजा पाषाणसे भी अधिक कठोर है। तुम्हारे जीवित रहते मेरी यह दुर्दशा ! तुमने तो बंगालकी दशा देखी भी है। तुम्हें शर्म नहीं आती शान्तिका असमय सन्देश देते ? तुम्हें ईश्वरका जरा भी भय नहीं रहा जो तुम मुझ-जैसी निरीह अबलाओंपर अत्याचार करनेवाले दुर्वृत्तोंके साथ सन्धिकी चर्चा छेड़कर मेरे साथ निष्ठुर उपहास कर रहे हो ?

ओ भारतके वीरो ! तुम आज मुर्दा बन गये हो ! भूल गये ? निर्यातिता द्रौपदीके केश भीमसेनने दुष्ट दुःशासनके रक्तसे सींचे थे। भूल गये ? सन्धिका संदेश लेकर आते समय श्रीकृष्णको द्रौपदीने अपने खुले केश दिखलाकर सचेत किया था ! आज कितनी द्रौपदियाँ निर्यातिता हैं, धर्षिता हैं और अपमानिता हैं। उनके केशही नहीं खींचे गये हैं। अरे, सुनकर तुम्हारी छाती क्यों नहीं फट जाती–उनके तमाम पवित्र अवयवोंको मलिन म्लेच्छोंने अपवित्र कर दिया है !

अरे भारतके और बंगालके क्रान्तिकारी युवको ! धरती

फटे और सब उसमें समा जाओ तो कलङ्कसे तो बच जाओ ! मैं तुम्हारी बहिन इस तरह चिल्ला चिल्लाकर अपना दुःख सुनाऊँ और तुम उसे न सुनो ! अच्छा होता मेरी माँ तुम्हें जन्म न देकर बाँझही रहती और मैं बिना भाईकेही सन्तोष तो करती !

ओ भय्या जवाहिर और बूढे पटेल दादा ! तुम लोगोंसे बडी आशा थी मुझे। पर तुमने तो लुटियाही डुबो दी ! हाय ! तुमने मेरी ओर झुककर झाँका भी नही ! तुम्हे शम नहीं आयी, मरी सहानुभूतिसे उबल पडनेवाले भावुक बिहारी बन्धुओंकी छातीको छलनी बनाते समय ? क्या कहूँ तुम्हारी मर्दानगीके लिये, तुम्हार बल पारुषके लिये ? क्या पदवी दूँ तुम्हारी दुर्बल और भयभीत सरकारको ? अब भी एक बार मेरी करुण दशाकी ओर देखो तो सही !

अरे योगी अरविन्द ! तुम अपने चेलोंको लिय पाण्डि चेरीमें चुपचाप बैठ क्या कर रहे हो ? तुम्हारी बहिन, तुम्हारी कन्या आज रो-रोकर तुम्हें जगा रहा रही है। खोलो अपनी समाधिको। दिखला दो अपने ईश्वरीय तेजकी ज्वालाको, और यदि कुछ शक्ति मिली है तो उससे जला दो दुष्ट दुर्वृत्तोके आस्तित्वको !

अरे भैया सुभाष ! सुना है तुम अभी मरे नहीं हो ! पर मेरे लिये तो मरही गये ! क्या मेरी दुर्दशाकी कथा सुन कर और अपनेको मेरे उद्धारमें असमथ पाकर कहीं मुँह छिपाये पडे हो ? अच्छा ! पडे रहो ! क्या करोग मुँह दिखाकर ! साहस हो और कुछ करनेकी शक्ति हो तो ही प्रकट होना। सुना है तुम नीतिनिपुण हो। निर्माण कलामें निपुण हो और बहादुर भी हो ! फिर कब काम आवेगी तुम्हारी यह गुणावली ? शर्माओ ! अपनी असहाय बहिनके करुण-क्रन्दनपर शर्माओ !

अरे राम और हनूमानके उपासको ! तुम्हारी उपासनाको धिक्कार है ! आज सीता अपहृताही नहीं है। रावणकी अशोकवाटिकामें बन्दिनीही नहीं है। वह सर्वथा अपमानिता है। क्या दुष्ट रावणकी लङ्का अब भी नहीं जलेगी ? अरे, तुम्हारी पूँछमें भी आग लग चुकी है। अब छलाँग मारकर चढ जाओ आततायी रावणकी लङ्कापुरीके प्रत्येक भवनपर और उसे जलाकर खाक कर दो अभी इसी क्षण !

अरी हिंदू-जाति ! हिंदू धर्म ! री हिंदूसंस्कृति ! तेरी यह दुर्दशा ! तेरा यह अधःपतन !! क्या हो गया आज ? राम कृष्ण भीम, अर्जुन, प्रताप, शिवाजी, नानक, गोविन्दसिंह और दुर्गावती लक्ष्मीबाईकी जाति क्या हिंदू रक्तसे सर्वथा शून्य हो गयी ! इससे तो मर मिटना उत्तम था। अरे हिन्दुपुरुषो तुम किस मुँहको लेकर अपनी माँ-बहिनोंके अपनी पत्नी तथा पुत्रवधुओंके सामने जाते हो ? किस मुँहको लेकर जी रहे हो ? मुँह काला करके चले जाओ जगलोमें !

माताओ ! बहिनो। अब आशा छोड दो इन नपुसक पुरुषोंकी ! लो कटार हाथमे बन जाओ रणचण्डी मुण्डमाला धारिणी कालिका। निकल पडो घरोंसे और एक एक आततायी के रक्तसे अपने हृदयकी प्रज्वलित अग्निशिखाको शान्त करो।

घबराओ नहीं ! निराश न होओ ! तुम्हारे हुकारसे त्रिभुवन काँप जायगा ! भूतभावन भगवान् रुद्रका आसन डोल जायगा ! पापियोंका पतन होगा ! पिशाचिनियोंके खप्पर भरेंगे और तुम्हारा पुनरुद्धार और पुन प्रतिष्ठा होगी ! अमरगण पुष्पवर्षा करेंग ! !

अभागिनी उन्मादिनी बंगकन्या—

(कल्याण) नोआखालीनिवासिनी अमियबाला

स्वाध्याय-मण्डल, औंध (जि० सातारा) की हिंदी पुस्तकें ।

१ ऋग्वेद-संहिता	मू. ६)	डा.व्य. १।)
२ यजुर्वेद-संहिता	(समाप्त)	
३ सामवेद ”	(,,)	
४ अथर्ववेद ”	(,,)	
५ काण्व-संहिता	४)	॥=)
६ मैत्रायणी सं०	६)	१)
७ काठक सं०	६)	१)
८ तैत्तिरीय सं०	६)	१)
९ दैवत-संहिता १ म भाग	६)	१॥)
१० ,, ,, २ य भाग	६)	१॥)
ऋग्वेदका सुबोध भाष्य		
१ मधुच्छन्दा ऋषिदर्शन	१)	।=)
२ मेधातिथि ,,	२)	॥=)
मरुद्देवता-(पदपाठ, अन्वय, अर्थ)		
१ मंत्र-संग्रह, समन्वय, मंत्रसूची, तथा हिंदी अनुवाद	मू. ७)	१॥)
२ मंत्र-संग्रह तथा हिंदी अनुवाद	५)	१)
३ हिंदी अनुवाद	४)	॥।)
४ मंत्रसमन्वय तथा मंत्रसूची	२)	॥)
संपूर्ण महाभारत	७५)	
महाभारतसमालोचना (१-२)	१॥)	॥)
संपूर्ण वाल्मीकि रामायण	३०)	६।)
भगवद्गीता (पुरुषार्थबोधिनी)	१०)	१॥)
गीता-समन्वय	२)	॥)
,, श्लोकार्धसूची	॥=)	≡)
गीताका राजकीय तत्त्वालोचन	१)	॥)
Bhagavad Gita	Rs. 15/-	
अथर्ववेदका सुबोध भाष्य ।	२४)	४॥)
संस्कृतपाठमाला ।	७॥)	॥≈)
वै. यज्ञसंस्था भाग १	१)	।)
छूत और अछूत (१-२ भाग)	२)	॥)
योगसाधनमाला ।		
१ योगके आसन । (सचित्र)	२॥)	।≡)
२ ब्रह्मचर्य ।	१॥)	।-)
३ योगसाधनकी तैयारी ।	१)	।-)
४ सूर्यभेदन-व्यायाम	॥।)	≈)

देवतापरिचय-ग्रंथमाला		
१ रुद्रदेवतापरिचय	॥)	≡)
२ ऋग्वेदमें रुद्रदेवता	॥=)	≈)
३ देवताविचार	।)	-)
४ अग्निविद्या	२)	॥)
बालकधर्मशिक्षा		
१ भाग १ ≈) तथा भाग २ ≡)		≈)
२ वैदिक पाठमाला प्रथम पुस्तक	।)	-)
आगमनिबंधमाला ।		
१ वैदिक राज्यपद्धति	।≈)	-)
२ मानवी आयुष्य	।)	-)
३ वैदिक सभ्यता	।॥)	≡)
४ वैदिक स्वराज्यकी महिमा	॥≈)	≡)
५ वैदिक सर्पविद्या	॥≈)	=)
६ शिवसंकल्पका विजय	॥≈)	=)
७ वेदमें चर्खा	॥≈)	=)
८ तर्कसे वेदका अर्थ	॥≈)	=)
९ वेदमें रोगजंतुशास्त्र	।)	-)
१० वेदमें लोहेके कारखाने	॥)	-)
११ वेदमें कृषिविद्या	।)	-)
१२ ब्रह्मचर्यका विघ्न	=)	-)
१३ इंद्रशक्तिका विकास	॥।)	=)
उपनिषद्-माला ।		
१ ईशोपनिषद् १॥) २ केन उपनिषद्	१॥)	।-)
१ वेदपरिचय- (परीक्षाकी पाठविधि)		
१ भाग १ ला	१॥)	॥)
२ ,, २ रा (समाप्त)	१॥)	॥)
३ ,, ३ रा	१॥)	॥)
२ वेदप्रवेश (परीक्षाकी पाठविधि)	५)	।॥)
३ गीता-लेखमाला ५ भाग	६)	१॥)
४ भागवन्दी भगवद्गीता १भाग	१)	।=)
५ सूर्य-नमस्कार	॥।)	=)
६ ऋगर्थ-दीपिका (पं. जयदेव शर्मा)	४)	॥)
शतपथबोधामृत	।≈)	-)
अक्षरविज्ञान	१)	।=)
यजुर्वेद अ. ३६ शांतिका उपाय	॥।)	≡)

Regd. No. B. 1463

मुद्रक और प्रकाशक- व० श्री० सातवळेकर, भारत-मुद्रणालय, औंध.